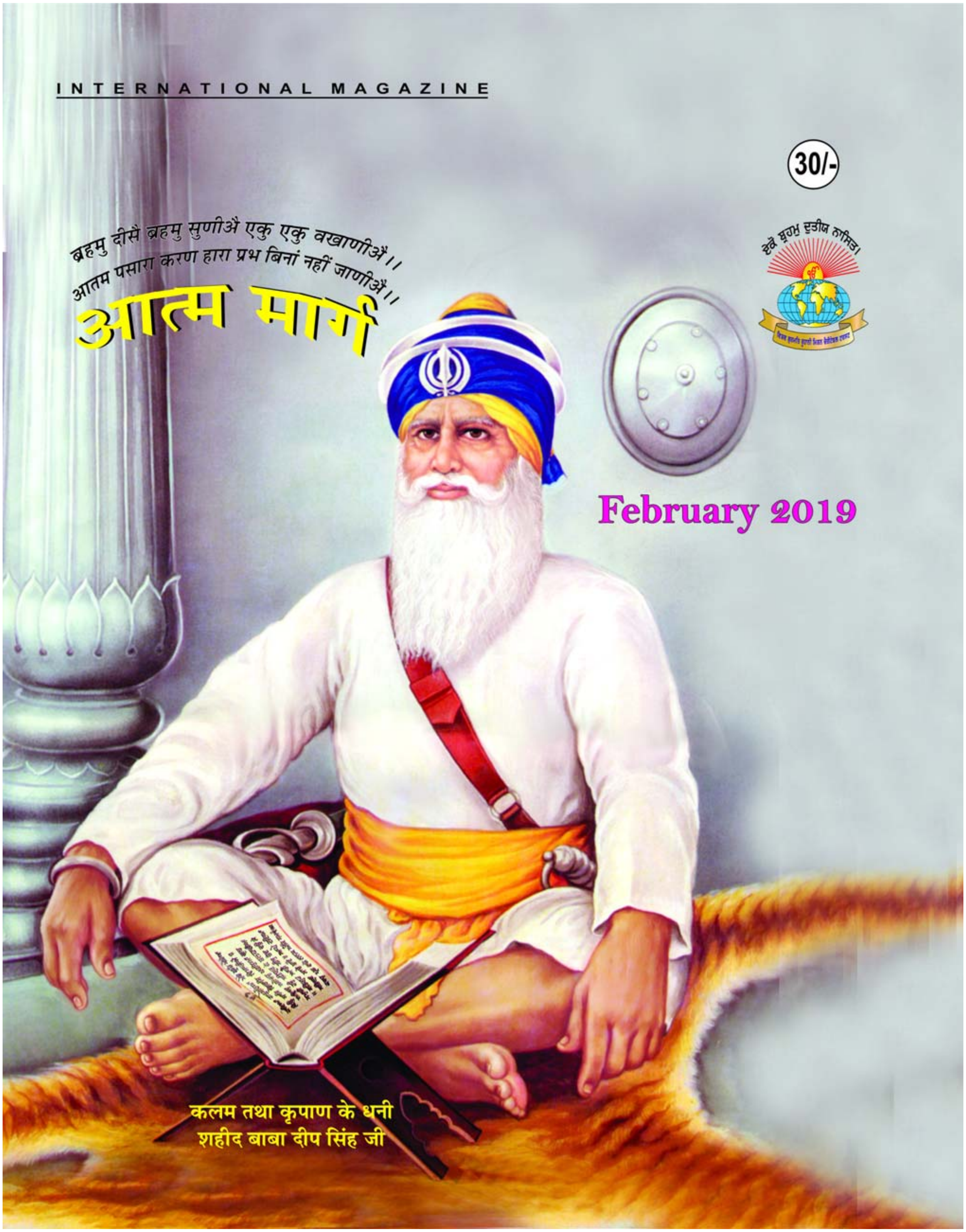
INTERNATIONAL MAGAZINE
30/-
ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ ॥
आतम पसारा करण हारा प्रभ बिनां नहीं जाणीऐ ॥
आत्म मार्ग
February 2019
कलम तथा कृपाण के धनी
शहीद बाबा दीप सिंह जी

सन्त बाबा लखबीर सिंह जी सितारगंज (यू. पी.) में संगत को कीर्तन के माध्यम से गुरू शब्द के साथ जोड़ते हुए।
कीर्तन का रसास्वादन हुए असंख्य श्रद्धालुजन।

आत्म मार्ग

वर्ष तेइसवां - अंक पहला, फरवरी 2019

गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब

संचालक

श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज (ब्रह्मलीन)
तथा संत माता (बीजी) रणजीत कौर जी (ब्रह्मलीन)

चेयरमैन	एडिटर-इन-चीफ
सन्त बाबा लखबीर सिंह जी	सन्त बाबा हरपाल सिंह जी
प्रबन्ध सम्पादक	**मुख्य सम्पादक**
भाई (डा.) सुखविंदर सिंह	डा. जगजीत सिंह (97798 16909)

मासिक पत्रिका न पहुँचने सम्बन्धी पूछताछ

यदि आपको माह की 15 तारीख तक आत्म मार्ग पत्रिका प्राप्त नहीं हो पाती है तो आप कृप्या निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों पर कार्यलय समय प्रातः 10.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक सम्पर्क करने की कृपा करें -

सम्पर्क न. - **84378-12900, 94172-14391, 94172-14379**

Email : atammarg1@yahoo.co.in

Postal Address for any Enquiry, Money Order's :

'ATAM MARG' MAGAZINE
Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib (New Chandigarh) P.O. Mullanpur Garibdas, Teh. Kharar, Distt. S.A.S. Nagar (MOHALI) - 140901, Pb. India

SUBSCRIPTION - शुल्क (देश)

वार्षिक	आजीवन सदस्यता	प्रति कापी
300/-	3000/-	30/-
320/-	3020/- (For outstation cheques)	

SUBSCRIPTION FOREIGN (विदेश)

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Canada	80 Can $	800 Can $
Australia	80 Aus $	800 Aus $

प्रकाशन के समस्त अधिकार सुरक्षित हैं।

प्रकाशक, मुद्रक एवं सम्पादक सन्त बाबा हरपाल सिंह जी ने 'आत्म मार्ग' जै आफ सैट प्रिंटर्ज, 905 इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज़-2, चण्डीगढ़ से छपवा कर मुख्य कार्यालय 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब, डाकखाना मुल्लांपुर, तहसील खरड़, एस.ए.एस. नगर (मोहाली), पंजाब से प्रकाशित किया।

Please visit us on internet at :-
For Atam Marg Email : atammarg1@yahoo.co.in,
Website & Live video -

www.ratwarasahib.in
www.ratwarasahib.org } **(Every sunday)**

Email: sratwarasahib.in@gmail.com

विदेशों में आत्म मार्ग की शाखाएँ

अमेरिका - बाबा सतनाम सिंह अटवाल
फोन तथा फैक्स : 001-408-263-1844

कैनेडा - भाई सरमुख सिंह पंनू, वैनकूवर
फोन : 001-604-433-0408

भाई तरसेम सिंह बैंस - मोबाइल 001-604-862-9525
फोन : 001-604-288-5000

भाई जसबीर सिंह राणू - फोन : 001-604-589-9189

इंगलैंड - बीबी गुरबख्श कौर तथा भाई जगतार सिंह जग्गी
फोन:0044-121-200-2818 फैक्स :0044-121-200-2879,

भाई अरविंदर सिंह (राज) मोबाइल:0044-7968734058

आस्ट्रेलिया : बीबी जस्प्रीत कौर: मोबाइल-0061-406619858

रतवाड़ा साहिब की संस्थाओं के सम्पर्क नम्बर

* आत्म मार्ग मैगज़ीन (पंजाबी, हिन्दी तथा अंग्रेजी)
9417214391, 9417214379, 8437812900

* गुरू गोबिंद सिंह विद्या मन्दिर सीनियर सैकण्डरी स्कूल **(CBSE) - 0160-2255003**

* माता साहिब कौर मुफ्त सिलाई सैंटर - **96461-01996**

* सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल **(PSEB)** अंग्रेजी माध्यम - **95920-55581**

* सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल (मुफ्त)
98786-95178, 92176-93845

* इंटरनैशनल डिवाइन स्कूल आफ़ नर्सिंग -
94172-14382

* इंटरनैशनल डिवाइन कालेज आफ़ ऐजूकेशन (बी. एड.)
94172-14382

* अकाल वृद्ध आश्रम (मुफ्त) **98157-28220**

विशेष जानकारी के लिए

श्री मान जी	-	98551-32009
श्री आखण्ड पाठ साहिब बुकिंग	-	94647-12900
आडियो-वीडियो लाईब्रेरी	-	98728-14385, 98555-28517
केवल टी.वी. नेटवर्क	-	94172-14385

अन्य सम्पर्क नम्बर

98889-10777, 96461-01996, 9417214381

विषय-सूची

1. सम्पादकीय 5
भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

2. बारहमाहा 8
डा. जगजीत सिंह

3. बाबाणियाँ कहानियाँ 13
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

4. पड़िऐ नाही भेदु बुझिऐ पावणा 17
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

5. बिनु सबदै अंतरि आनेरा 23
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

6. सासि सासि सिमरहु गोबिंद 33
सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

7. गुरबाणी अर्थ भण्डार 36
सन्त हरी सिंह जी 'रन्धावे वाले'

8. नूरानी मिलाप 38
भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

9. शहीद बाबा दीप सिंह 40
स. रणजीत सिंह राणा

10. बारां भाई गुरदास 46
डा. भाई बीर सिंह जी

11. भाई नन्द लाल जी 48

12. गुरु नानक आगमन 50
डा. भाई वीर सिंह जी

13. स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार 53
डा. स्वामी राम जी

14. विशेष जानकारी - बैंक खाता, आत्म मार्ग मैगजीन सदस्यता प्रारूप, अस्पताल जानकारी, तथा पुस्तक सूची 55

सम्पादकीय

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

संसार की कोई भी वस्तु बेशकीमती है अथवा अर्थहीन है, यह मनुष्य की दृष्टि पर निर्भर करता है। दरअस्ल मनुष्य की दृष्टि उसके मन के साथ जुड़ी हुई है और उसके अन्दर का संसार यानि कि मन, चित्त, बुद्धि व अहंभाव प्रत्येक वस्तु के बारे में निर्णय करते हैं। कद्रदान के लिए कोई वस्तु मूल्यवान हो सकती है जबकि कद्रहीन व्यक्ति को वही वस्तु तुच्छ प्रतीत होगी। बहुमूल्य या अमूल्य चीजें सद्‌बुद्धि वाले के लिए ही अमूल्य हैं जबकि केवल बुद्धिमण्डल तक सोच रखने वाले व्यक्ति के लिए वे अत्यन्त सीमित अर्थ वाली ही होती हैं। डा. वीर सिंह जी के अनुसार -

जिन्हां उचयाईआं उतों 'बुधी' खंभ साड़ ढठी,
मल्लो मल्ली उथे दिल मारदा उडारीआं।
पजाले अणडिठे नाल, बुल्ह लग जाण ओथे,
रस ते सरूर चड़े, झूंमां आउण पयारीआं।
'गजानी' सानूं होड़दा ते 'वहिमी ढोला' आखदा ए,
'मारे गए जिन्हं लाईआं बुधों पार तारीआं।'
'बैठ वे गिआनी! बुधी मंजले दी कैद विच, '
वलवले दे देश' साडीआं लग गईआं यारीआं। डा. भाई
वीर सिंघ जी

क्योंकि उसका सोच का दायरा विशाल नहीं है। ऊँची व सुच्ची सोच तथा दृष्टि दोनों ही समानान्तर हैं। सांसारिक वस्तुओं में लोभायमान होना और उनमें से सुख की तलाश करना, एक निम्न स्तर की दृष्टि है जबकि इससे ऊपर यानि कि इस हँसते-बसते संसार के पीछे किसी अनन्त व अगम्य शक्ति पर अपनी दृष्टि को रखना, एक उच्च स्तर की दृष्टि है। यही कारण है कि परमात्मा के प्यारों का गुरवाणी के अन्दर इस प्रकार से महिमा मण्डन किया गया है -

संत सहाई जीअ के भवजल तारणहार ॥
सभ ते ऊचे जाणीअहि नानक नाम पिआर ॥
अंग - 929

गुरवाणी के इस पावन सिद्धान्त से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस प्रकार की हस्तियाँ भी हैं जो कि सबसे ऊँची हैं। क्यों ऊँची हैं? क्योंकि उन्होंने परमात्मा के साथ अपना प्यार स्थापित किया हुआ है और इस दृष्टिमान संसार से अपनी दृष्टि को उठाकर इस संसार के पीछे निवास कर रहे वाहिगुरू को देखा है।

निम्न स्तर की दृष्टि वाले, इस संसार के पदार्थों में से ही सुख की तलाश करते हैं जबकि प्रभु जी को प्यार करने वाले, इस संसार को चलाने वाली अथाह शक्ति को प्यार करके तथा उससे अभेदता स्थापित करके, शाश्वत जीवन को प्राप्त कर लेते हैं। यथा -

प्रभ की आगिआ आतम हितावै ॥
जीवन मुकति सोऊ कहावै ॥
तैसा हरखु तैसा ऊसु सोगु ॥
सदा अनंदु तह नही बिओगु ॥
तैसा सुवरनु तैसी ऊसु माटी ॥
तैसा अंम्रितु तैसी बिखु खाटी ॥
तैसा मानु तैसा अभिमानु ॥
तैसा रंकु तैसा राजानु ॥
जो वरताए साई जुगति ॥
नानक ओहु पुरखु कहीऐ जीवन मुकति ॥
अंग - 275

'जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि' एक सांसारिक कहावत है लेकिन इसकी पुष्टि गुरवाणी के अन्दर भी हू-ब-हू हो रही है -

मनि मैलै सभु किछु मैला
तनि धोतै मनु हछा न होइ ॥ अंग - 558

जिनके पास निर्मल दृष्टि है, उन्हें कोई दूसरा दिखाई ही नहीं पड़ता है। भाई कन्हैया जी को मुगल, पहाड़िए, हिन्दू व सिक्ख आदि दिखाई नहीं पड़ते हैं बल्कि उन्हें तो सबके अन्दर कलगीधर पिता जी का स्वरूप ही दिखाई पड़ता है क्योंकि उनके नेत्रों में समर्थ सतगुरू जी ने ज्ञान रूपी सुर्मा डालकर उन्हें निर्मल कर दिया है -

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु ॥
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु ॥
अंग - 293

तुरक अतुरक न दिसदा मैनूं
तूं सारे दिस आईं।

पिआरे दे इक पिआर प्रोता
उस दी सेव करावां,
उस नूं देखां, उस नूं सेवां,
पाणी उनूं पिलावां।
हस्से ते गल लाइआ पयारा
डब्बी हथ फड़ाई -
पाणी नाल मल्लम बी रखीं
लोड़ पई ते लाईं।

पृष्ठ - 245-46 (श्री गलगीधर चमत्कार)

उस ज्ञान रूपी सुर्मे ने नेत्र भी खोल दिए तथा मन के अन्दर प्रकाश भी कर दिया। फलस्वरूप जन्म-जन्मान्तरों की सोई हुई सुरति जागृत हो गई और जागृत सुरति वालों को कोई बुरा दिखाई नहीं पड़ता है। उनके लिए तो -

कबीर सभ ते हम बुरे हम तजि भलो सभु कोइ ॥
जिनि ऐसा करि बूझिआ मीतु हमारा सोइ ॥
अंग - 1364

स्वयं को बुरा कहने व मानने वाले को गुरू जी अपना मित्र होने का ऐलान करते हैं और इससे आगे गुरू जी कथन करते हैं कि -

पर का बुरा न राखहु चीत ॥
तुम कउ दुखु नही भाई मीत ॥ अंग - 386

अर्थात दूसरे का भला सोचना ही अपना भला है। 'कर भला हो भला' व 'नेकी कर दरिया में डाल' आदि। लोकोक्तियों की पुष्टि गुरवाणी में सहज रूप में ही हो जाती है। उदाहरण के तौर पर युधिष्ठर को चारों कुण्टों में ढूँढ़ लेने के बाद भी कोई बुरा नहीं मिला जबकि इसके विपरीत दुर्योधन को स्वयं के अतिरिक्त कोई अच्छा मनुष्य नहीं मिला। वास्तव में यह अन्तर दोनों की दृष्टि के अन्तर की बदौलत ही था। इसका एक और बड़ा ही सुन्दर प्रमाण पावन रामायण में से प्राप्त होता है। श्री रामायण के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास जी ने रावण की अशोक वाटिका के फूलों का रंग सफेद लिखा है जबकि हनुमान जी को उसी वाटिका के फूलों का रंग लाल दिखाई पड़ा। वास्तव में दोनों ही सच्चे थे क्योंकि वहाँ पर दृष्टि का भेद विद्यमान था। हनुमान जी जिस समय अशोक वाटिका में गए उस समय उनके अन्दर क्रोध की ज्वाला धधक रही थी, जिसके प्रभाव से उन्हें फूलों का रंग लाल दिखाई पड़ा जबकि श्री रामायण के रयिता गोस्वामी तुलसीदास जी के अन्दर परम शाान्ति थी, जिसके फलस्वरूप उन्हें उन फूलों का रंग सफेद दिखाई पड़ा। उपर्युक्त प्रमाणों के अनुसार दृष्टि भेद का अन्तर स्पष्ट होता हुआ प्रतीत हो रहा है, जैसे कि आधे भरे हुए जल के गिलास को एक व्यक्ति की सोच आधा भरा हुआ कहेगी जबकि दूसरे की सोच आधा खाली कहेगी। यहाँ पर अन्दर केवल सकारात्मक व नकारात्मक सोच का है। सकारात्मक सोच को ही बुलन्दावस्था कहा गया है लेकिन यह सोच केवल सोचने मात्र से ही नहीं आती है बल्कि नाम सिमरन के साथ जुड़कर ही बुलन्दावस्था में निवास हो सकता है। दृष्टि का भेद उस समय प्रखर रूप में सामने आया जिस समय कुछ लोगों ने श्री गुरू नानक देव जी को निरंकार, अल्लाह, खुदा या परमात्मा कहा जबकि सोई हुई सुरति व ज्ञानहीन नेत्रों वाले अज्ञानी लोगों ने कहा -

कोई आखै भूतना को कहै बेताला ॥
कोई आखै आदमी नानकु वेचारा ॥ अंग - 991

प्यार की मूरति राए बुलार जी तथा बेबे नानकी जी को श्री गुरू नानक साहिब जी निरंकार की ज्योति दिखाई पड़ते हैं जबकि सांसारिक रिश्ते वाले पिता श्री कल्याण दास मेहता जी आपको जीवन के अन्तिम पलों तक केवल सांसारिक दृष्टि के साथ ही देखते रहे। पिता श्री जी को जीवन के कुछ आखिरी पलों में यह दृष्टि-भेद जागृत हो जाता है। उस समय आप श्री गुरू नानक देव जी को पुत्र भावना से ऊपर उठकर परमात्मा रूप में देखने लग पड़ते हैं। एक नहीं बल्कि अनेकों ऐसे ऐतिहासिक व मिथिहासिक प्रमाण मिलते हैं जो कि दृष्टि के इस भेद को प्रकट करते हैं।

प्रस्तुत दृष्टि-भेद सिद्धान्त की पुष्टि उस समय और भी स्पष्ट हो जाती है जिस समय हम आत्म मार्ग के प्रस्तुत अंक में नाम के रंग में रंगी हुई आत्मा, डा. भाई वीर सिंह जी द्वारा रचित श्रंखलाबद्ध लेख 'गुरू नानक आगमन' में सालसराए जौहरी का श्री गुरू नानक साहिब के साथ मिलाप वाला प्रसंग पढ़ते हैं। सतगुरू जी द्वारा भाई मरदाना जी को प्रदत्त किया गया बेशकीमती 'लाल', बाजार में साधारण व्यापारियों को अर्थहीन प्रतीत होता है जबकि जौहरियों को वह अत्यन्त मूल्यवान दिखाई पड़ता है। बाजार में उस 'लाल' को हलवाई, सब्जी विक्रेता व कपड़ा विक्रेता अर्थहीन बतलाते हैं या अत्यन्त कम मूल्य वाला बतलाते हैं, जबकि वही लाल जिस समय सालसराए जौहरी के पास पहुँचता है तो फिर वही बेशकीमती बन जाता है और वह (सालसराए जौहरी) उसकी दर्शनीय भेंट ही सौ रुपए रखता है। इसी प्रकार से एक दृष्टि, जो कि अन्य सभी दृष्टियों से ऊँची व पूर्ण अनुभव की दृष्टि है, इस संसार को परमात्मा का घर व उसी का रूप मानती है। यह दृष्टि दिव्य आँखों के साथ देखती है और दिव्य कानों

के साथ सुनती है। यह दृष्टि, इस दृष्टिमान संसार से अपने ध्यान को उठाकर उस परमात्मा या निजत्व में लीन हो जाती है। यथा -

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु ॥
मन हरि जी तेरै नालि है गुरमती रंगु माणु ॥

अंग - 441

फिर उस अनन्त व अगम्य ज्योति की झलक दिखाई पड़ती है। फिर चलते-फिरते, सोते-जागते, उठते-बैठते, सोते-जागते व खाते-पीते यानि कि प्रत्येक समय इस संसार में से उसी परमात्मा की झलक दिखाई पड़ने लगती है। फिर इस दृश्यमान जगत में से उसी परमात्मा के अस्तित्व का अहसास होने लगता है। फिर उस विराट अस्तित्व में, अपना अत्यन्त छोटा सा अस्तित्व अभेद हो जाता है, फिर दूसरा कोई रहता ही नहीं है -

मन मेरे जिनि अपुना भरमु गवाता ॥
तिस कै भाणै कोइ न भूला
जिनि सगलो ब्रहमु पछाता ॥ *अंग - 610*

फिर अपना आप समाप्त हो जाता है और शेष केवल वह 'एक' ही रह जाता है। फिर यही दृश्यमान संसार 'इहु जगु सचै की है कोठड़ी सचे का विचि वास।।' 'बलिहारी कुदरति वसिआ तेरा अंत न जाई लखिआ।।' के रूप में दिखाई देने लग पड़ता है। इस दृश्यमान संसार में से अपनी दृष्टि को उठाकर, उस अदृश्य परमात्मा पर रखना ही गुरुमुख मार्ग है और यही आत्म मार्ग है। इसी संकल्प की पूर्ति हेतु रतवाड़ा साहिब वाले प्यारे महापुरुषों ने दिन-रात नाम वाणी का प्रचार करते हुए असंख्य प्राणियों को इस तरफ प्रेरित किया। आज भी आत्म मार्ग मैगजीन के माध्यम से उनके प्रवचनों को घर-घर तक पहुँचाने के प्रयत्न, ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब के द्वारा जारी हैं। परमात्मा के प्यारों के लिए नाम अमूल्य है। उनके लिए तो -

हरि आपि अमुलकु है मुलि न पाइआ जाइ ॥
मुलि न पाइआ जाइ किसै विटहु रहे लोक विललाइ ॥

अंग - 921

साई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो ॥
जिना भाग मथाहि से नानक हरि रंगु माणदो ॥

अंग - 81

समझदारों के लिए परमात्मा का नाम अमूल्य है लेकिन जिनके पास यह दृष्टि नहीं है, उनके लिए तो यह अर्थहीन है। जिनके पास उच्च स्तर की दृष्टि नहीं है, वे सब पदार्थों में से सुख की तलाश करते हैं लेकिन उन्हें यह नहीं पता है कि -

सुखु नाही बहुतै धनि खाटे ॥
सुखु नाही पेखे निरति नाटे ॥
सुखु नाही बहु देस कमाए ॥
सरब सुखा हरि हरि गुण गाए ॥ 1 ॥
सूख सहज आनंद लहहु ॥
साधसंगति पाईऐ वडभागी
गुरमुखि हरि हरि नामु कहहु ॥ अंग - 1147

इस पावन गुरवाणी की पंक्ति में से कई प्रकार के सिद्धान्त प्रकट हो रहे हैं। बहुत अधिक धनोपार्जन करने से, नाटकों-चेटकों में व्यस्त रहने से, अधिकाधिक देशों में भ्रमण करने से तथा अन्य देशों पर जीत हासिल कर लेने से सुख की प्राप्ति नहीं की जा सकती है बल्कि सुख की प्राप्ति तो तभी सम्भव है जबकि परमात्मा की स्तुति में या उसके यशगान में जुड़ा जाए और उसके प्यारों के सान्निध्य में समय व्यतीत किया जाए यानि कि उनकी संगत में रहा जाए। गुरुमुखजनों की संगत का प्राप्त हो जाना उत्तम भाग्य की पहचान होती है। फिर उनकी संगत में जाकर नाम की कमाई की जाती है। उसके फलस्वरूप फिर शाश्वत जीवन व शाश्वत सुख की प्राप्ति हो जाती है। फिर कण-कण में से ईश्वरीय ज्योति की झलक दिखाई पड़ने लगती है। यही दिव्य दृष्टि है और यही बुलन्दावस्था है जो कि गुरुमुखजनों को नाम सिमरन के द्वारा प्राप्त होती है। यही नाम खुमारी है और यही बसन्त ऋतु है जैसे कि पावन गुरवाणी का फुरमान है-

बसंतु चड़िआ फूली बनराइ ॥
एहि जीअ जंत फूलहि हरि चितु लाइ ॥ 1 ॥
इन बिधि इहु मनु हरिआ होइ ॥
हरि हरि नामु जपै दिनु राती
गुरमुखि हउमै कढै धोइ ॥ 1 ॥ *अंग - 1177*

इसी नूरानी व उल्लासमयी जीवन के लिए गुरुमुखजनों द्वारा अरदास या प्रार्थना की जाती है। विचार का तात्पर्य है कि ऊँची दृष्टि के द्वारा इस जीव का उद्धार हो सकता है। अब यह दृष्टि भेद क्यों है, इसकी विचार आगामी अंक में, गुरू जी की कृपा, पाठकजनों के प्यार तथा उनकी आशीषों के फलस्वरूप की जाएगी। सभी के लिए ऊँची व सुच्ची दृष्टि हेतु अरदास है जी।

फलगुणि

(संक्रान्ति - 13 फरवरी, 2019 दिन बुद्धवार)

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

फलगुणि अनद उपारजना हरि सजण प्रगटे आइ।
संत सहाई राम के करि किरपा दीआ मिलाइ।
सेज सुहावी सरब सुख हुणि दुखा नाही जाइ।
इछ पुनी वडभागणी वरु पाइआ हरि राइ।
मिलि सहीआ मंगलु गावही गीत गोविंद अलाइ।
हरि जेहा अवरु न दिसई कोई दूजा लवै न लाइ।
हलतु पलतु सवारिओनु निहचल दितीअनु जाइ।
संसार सागर ते रखिअनु बहुड़ि न जनमै धाइ।
जिहवा एक अनेक गुण तरे नानक चरणी पाइ।
फलगुणि नित सलाहीऐ जिसनो तिलु न तमाइ॥
अंग - 136

वाहिगुरू जी ने अपनी मौज में सृष्टि की रचना की। शबद से प्रसार हुआ -

कीता पसाउ एको कवाउ। तिस ते होए लख दरीआउ॥
अंग - 3

जो कुछ भी हमें दृष्टिमान दिखाई दे रहा है वह सारा प्रसार गुरमत के अनुसार, एक शबद से अस्तित्व में आया-

एक कवावै ते सभि होआ। करणैहारा बुझहु रे।
अंग - 1003

हुक्म की क्रिया से आकार बन गये, अनेक जीव-जन्तु यौनियां प्रकट हो गईं। इन सभी यौनियों में से मनुष्य यौनि सबसे उत्तम है। जैसे-जैसे चेतना में प्रविष्ट होता गया, सूझ बढ़ती चली गई। ये सभी यौनियां, एक गोल चक्र की शक्ल में पहिये पर चढ़ी हुई घूमने लगीं। जैसे-जैसे विकास होता गया, वैसे-वैसे यह पूर्ण चेतना के चक्कर उस पहिये पर चढ़ कर धीरे-धीरे घूमती हुई आगे बढ़ती गईं और क्रमानुसार मनुष्य श्रेणी में प्रविष्ट होती रहीं -

कई जनम भए कीट पतंगा।
कई जनम गज मीन कुरंगा।
कई जनम पंखी सरप होइओ।
कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ।
मिलु जगदीस मिलन की बरीआ।
चिरंकाल इह देह संजरीआ॥ अंग - 176

मनुष्य की देह करोड़ों वर्षों की प्रतीक्षा के बाद प्राप्त हुई। इसका मुख्य लक्ष्य गुरू महाराज जी ने बहुत ही स्पष्ट करके बताया है। वह यह है कि इस शरीर के अन्दर वाहिगुरू जी स्वंय निवास करते हैं। पूर्ण महापुरुषों से मिलकर वाहिगुरू जी के द्वार तक पहुँचना है, पर हुआ क्या? यह मनुष्य माया के छल में आ गया और उसकी प्रबल शक्तियों काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार; शब्द, स्पर्श रूप रस, गन्ध जैसे विषयों तथा राज, माल, रूप, जात, यौवन जैसे ठगों के फन्दे में जकड़ा गया; आशा, अन्देशा के जाल में फंस गया। तृष्णा की आग की लपटों में जलने लगा। वैर, विरोध, काम, क्रोध, झूठ विकार, महा लोभ द्रोह की प्रबल शक्तियों के प्रभावाधीन अपने जीवन का समय व्यर्थ गवां बैठा। इस जीव के अन्दर 'हउमै' तत्व उभर कर पूरे यौवन से इसके ज्ञान और सूझ बूझ को दूषित करता रहा। इस जीव के कर्म, क्रिया और उन्हें अपनी सूझ बूझ में धारण कर लिया कि ये सारे कर्म मैंने ही किये हैं। 'मैं' के भाव से कर्मों का चक्र, इसके ईर्द-गिर्द चिपट गया और यह कर्म जाल में फंस गया। इस काम ने प्रभु ज्योति को भुला दिया और पुनः यह पतन की ओर उसी काम चक्र पर घूमने लगा। धीरे-धीरे फिर मानस देह प्राप्त करने के अवसर के निकट आने लगा, पर फिर मनुष्य बन कर उसी चक्कर में ग्रस्त हो गया। यह हमारी दशा है, जिसमें प्रवृत्त हुये, हम बाणी की सत्य आवाज़ को अन्दर सुन

नहीं रहे जो बार-बार यह कह रही है -

भई परापति मानुख देहुरीआ।
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ॥ अंग - 12

बाणी बता रही है कि तेरी बारी आ गई, तू सावधान हो जा। जिन कामों में तू व्यस्त है ये तेरी सहायता करने के लिए तेरे साथ नहीं जाएंगे। तुझे हम बड़े प्यार से सलाह देते हैं, उसे सुन -

करउ बेनती सुणहु मेरे मीता
संत टहल की बेला।
ईहा खाटि चलहु हरिलाहा
आगै बसनु सुहेला।
अउध घटै दिनसु रैणा रे।
मन गुर मिलि काज सवारे॥
इहु संसारु बिकारु संसे महि
तरिओ ब्रहमगिआनी।
जिसहि जगाइ पीआवै इहु रसु
अकथ कथा तिनि जानी॥
जा कउ आए सोई बिहाझहु
हरि गुर ते मनहि बसेरा।
निजघरि महलु पावहु सुख सहजे
बहुरि न होइगो फेरा॥ अंग - 13

और जिन कामों में हम व्यस्त हैं, उनकी नश्वरता को दर्शाते हुये आप फ़रमान करते हैं कि ये महल अटारियां जिनमें तू आकर्षित हो गया है, ये कुछ भी नहीं, केवल मिट्टी के ढेर हैं। माया कमाने के चक्कर में पड़ा हुआ तू गफलत कर रहा है और तेरा समय बीतथा जा रहा है, यह समय बार-बार नहीं आता -

कबीर मानस जनमु दुलंभु है होइ न बारैबार।
जिउ बन फल पाके भुइ गिरहि बहुरि न लागहि डार॥
अंग - 1366

इस प्रकार की कलाबाजियां लगाते हुए युगों के युग बीत गये। करोड़ों वर्ष व्यतीत हो गये। गुरू महाराज जी सावधान करते हुये फ़रमान करते हैं -

फिरत फिरत बहुते जुग हारिओ मानस देह लही।
नानक कहत मिलन की बरीआ सिसरत कहा नही॥
अंग - 631

फरीदा कोठे मंडप माड़ीआ एतु न लाए चितु।
मिटी पई अतोलवी कोइ न होसी मितु॥
अंग - 1380

तुरे पलाणे पउण वेग हर रंगी हरम सवारिआ।
कोठे मंडप माड़ीआ लाइ बैठे करि पासारिआ।
चीज करनि मनि भावदे हरि बुझनि नाही हारिआ।
करि फुरमाइसि खाइआ वेखि महलति मरणु विसारिआ।
जरु आई जोबनि हारिआ॥ अंग - 472

सो गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं कि प्यारे! तुझे बड़ी कठिनाई से यह मानस देह मिली है। यह केवल प्रभु के मिलने के लिए है। तू अनेक दुखों में पड़ा हुआ माया की जकड़ में आकर चक्कर काट रहा है। ऐ जीव! तू उन पुरुषों की संगत में जा, जिन्होंने वाहिगुरू जी के साथ मिलाप कर लिया है, जिन्हें एक श्वास भर के लिये भी प्रभु नहीं भूलता, वे तत्व वेत्ता सन्त, गुरू लोग, तुझे प्रभु के साथ मिला देंगे।

अवरि काज तेरै कितै न काम।
मिलु साध संगति भजु केवल नाम॥ अंग - 12

सो गुरू महाराज जी माझ राग के बारह माह में और स्पष्ट करते हुए फ़रमान करते हैं -

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम।
चारि कुंट दह दिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम॥
अंग - 133

सन्तों से मिलकर नाम की सूझ प्राप्त होती है -

संत जना मिलि पाईऐ रसना नामु भणा॥
अंग - 133

आप फरमाते हैं कि क्षण मात्र भी वाहिगुरू जी के बिना जीना व्यर्थ होता है। जो इस प्रभु को नहीं मिलता उसे कितने दुखों का सामना करना पड़ता है। इसका कोई अनुमान भी नहीं लगा सकता क्योंकि सारे क्लेश, सारे विघ्न इस जीव के गले पड़ जाते हैं। विद्या, असिमता अभिनिवेश, राग, द्वैष जैसे क्लेशों में पड़ा हुआ जीव, अपना जन्म व्यर्थ गंवा देता है। सो गुरू महाराज जी फरमाते हैं -

सो प्रभु चिति न आवई कितड़ा दुखु गणा॥
अंग - 133

कोटि बिघन तिसु लागते जिसनो विसरै नाउ॥
अंग - 522

बारह मास इस जीव को प्रभु मिलाप की लगन लगाते हैं और संगत में बैठ कर विचार करता है कि आज साल का एक चक्र पूरा करके अन्तिम पड़ाव पर पहुँच चुका हूँ। माघ के महीन में सन्तों की संगत करके और उन्होंने धूलि का महातम बताया था, जिसके फलस्वरूप इस जीव ने अपना जीवन ढाला और अब फाल्गुन के महीने मं इस की करोड़ों अरबों सालों की लगी हुई लालसा पूर्ण कर दी। वाहिगुरू जी प्रकट हो गये, सन्तों ने पूरी सहायता की। इससे पहले वाहिगुरू जी रहते कहाँ थे? गुरबाणी के अन्दर बहुत ही विस्तार के साथ, खोल कर बताया है कि इस शरीर का महत्व इसलिये है कि वाहिगुरू जी ने अपना आसन इस शरीर में स्थापित किया हुआ है। और अपने तक पहुँचने का रास्ता

तत्व वेत्ता महापुरुों को प्रकट किया हुआ है। वे संसार की भलाई के लिए कठिन परिश्रम करके जिज्ञासुओं को बताते रहते हैं कि इस शरीर के नौ दरवाज़ों में से कोई भी द्वार वाहिगुरू जी की ओर नहीं खुलता। ये सभी दरवाज़े वाहिगुरू जी की ओर नहीं खुलते। ये सभी द्वार बाहर की ओर खुलते हैं। आंखें देख कर तृप्त नहीं होती, कान गीत तथा नाद सुन-सुन कर उकताते नहीं, जीभ अनेक प्रकार के स्वादों में लिप्त रहती है। अनेक प्रकार के कु-रसों में लीन कमज़ोर होती जा रही है, नाक अनेक प्रकार की सुगन्धियों में लीन रहते हैं तथा इन्द्रियां भी विषय भोगों में आसक्त रहती है। ये सभी वाहिगुरू जी से मिलाने के लिये जब तक शुद्ध (पवित्र) न की जाएं, सहायता करने की बजाये इस जीव को बुरी तरह फंसा देते हैं, पर जब महापुरुषों की कृपा हो जाये और इस जीव को समर्थ गुरू का मन्त्र प्राप्त हो जाये तो यही इन्द्रियां सहायता करती हैं। रसना नाम जपती हैं, कान हरि का यश सुनते हैं और जिसका फल कई करोड़ों यज्ञों से भी अधिक होता है-

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम।
अंग - 546

नेत्र प्रभु प्यारों के दर्शन करके, चरण सत्संग में जाने के कारण, हाथ सेवा करके, हृदय में वाहिगुरू का प्यार बस जाने से, मस्तक संतों की धूलि से स्पर्श हो जाने से पवित्र हो जाता है।

चरनह गोबिंद मारगु सुहावा।
आन मारग जेता किछु धाईऐ
तेतो ही दुखु हावा।
नेत्र पुनीत भए दरसु पेखे
हसत पुनीत टहलावा।
रिदा पुनीत रिदै हरि बसिओ
मसत पुनीत संत धूरावा।
सरब निधान नामि हरि हरि कै
जिसु करमि लिखिआ तिनि पावा।
जन नानक कउ गुरु पूरा भेटिओ
सुखि सहजे अनद बिहावा॥ *अंग - 1212*

गुरू महाराज जी वाहिगुरू जी के निवास के बारे में फ़रमान करते हैं -

काइआ नगरु नगर गड़ अंदरि।
साचा वासा पुरि गगनंदरि।
असथिरु थानु सदा निरमाइलु
आपे आपु उपाइदा।
अंदरि कोट छडे हट नाले।
आपे लेवै वसतु समाले।
बजर कपाट जड़े जड़ि
जाणै गुर सबदी खोलाइदा।
भीतरि कोट गुफा घर जाई।
नउ घर थापे हुकमि रजाई।
दसवै पुरखु अलेखु अपारी
आपे अलखु लखाइदा॥ *अंग - 1033*

एक और स्थान पर स्पष्ट करते हुये फ़रमान करते हैं -

नउ दरवाजे काइआ कोटु है
दसवै गुपतु रखीजै।
बजर कपाट न खुलनी
गुर सबदि खुलीजै।
अनहद वाजे धुनि वजदे
गुर सबदि सुणीजै।
तितु घट अंतरि चानणा
करि भगति मिलीजै।
सभ महि एकु वरतदा
जिनि आपे रचन रचाई॥ *अंग - 954*

इस शरीर में उपमा रहित वाहिगुरू जी के निवास स्थान में वाहिगुरू जी का वास है। पर यह जीव माया में आकर्षित हुआ आन्तरिक मार्ग की पहचान नहीं करता और न ही इसके अन्दर रुचि पैदा होती है कि वाहिगुरू जी के दर्शन करूँ। यह जीव, नाम रूपी मोती चुगने की बजाये, मरे हुये विषय रूपी जानवरों का माँस नोंच-नोंच कर खाता है तथा अपना जन्म वृथा गंवाता है। जब बारह मास में बताये गये उपदेश, इस जीव ने अपना लिए तो उसे प्रभु के दर्शन हो जाते हैं। उसे वह गुप्त रास्ता मिल जाता है जो दसवें द्वार की ओर जाता है। इस महीने में प्रगट करते हुए गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं -

फलगुणि अनद उपारजना हरि सहज प्रगटे आइ॥
अंग - 134

वाहिगुरू जी के मिलाप का कितना आनन्द आया, यह अकथनीय और अवर्णनीय है। जिस जगह वाहिगुरू जी इस शरीर में रहते हैं। उसी के बारे में भाई गुरदास जी प्रकट करते हुए बताते हैं कि जो इस शरीर में दशम द्वार का स्थान है, उस का वर्णन करना अति कठिन है क्योंकि उसके समान कोई और स्थान है ही नहीं।

दशम द्वार वह स्त्रोत है, वह स्थान है, जहाँ से मन तथा इन्द्रियों की वृत्तियां, ताकत लेकर बहिर्मुखी होकर दौड़ती हैं तथा बाहर अपने-अपने पदार्थों को देखकर गमता पाकर पीछे को, अपने उक्त केन्द्र की ओर, बार-बार लगातार बाहरी तथा आन्तरिक कार्यवाही में लगी रहती हैं। वहाँ से इसे सता (शक्ति) मिलती है, जिसे पाकर यह जीव अपने स्वभाव के अनुसार कर्म करता है -

इस का बलु नाही इसु हाथ।
करन करावन सरब को नाथ॥ *अंग - 277*

सो सारी वृत्तियां बाहर की खबरें अन्दर भेजती रहती हैं। जब जीव कठिन परिश्रम करके दशम द्वार में सुरत के साथ पहुँचता है तो इस स्थान पर ज्योति के दर्शन होते हैं, जिसे उनमनी ज्योति कहा गया है। परिपक्व अभ्यास के कारण यह ज्योति साक्षात्कार हो जाया करती है और अन्दर अनहद नाद की सहज ध्वनि के रूप में 'नाम' की तार बज उठती है, जिसे अनहद ध्वनि कहा जाता है। इस धुन में सुरत अनवरत जुड़ जाती है तथा इस जी की सुरत अदभुत रस का अनुभव करती है। जिसकी तेल धारा के समान धारा प्रवाहित अवस्था को, अपार निर्झर धारा कह कर पुकारा गया है। अपने अस्तित्व में से पार निकल कर यह छोटा असितत्व बड़े में लीन हो जाता है। आप जी ने स्पष्ट करते हुए फ़रमान किया है -

दसम सथान के समान कौन भौन कहों
गुर मुखि पावै सु तउ अनत न पावई।
उनमनी जोति पटंतर दीजै कउन जोति
दया कौ दिखावै जाही ताही बन आवई।
अनहद नाद समसर नाद बाद कउन
श्री गुरू सुनावै जांहि सोई लिव लावई।
निझर अपार धार तुल न अंम्रितरस
अपिउ पीआवै जांहि ताही मै समावई॥
अंग - 36 (कवित सवेयै भाई गुरदास जी)

जब इस स्थान पर सुरत पहुँचती है तो ब्रह्म साक्षात्कार हो जाया करता है। दर्शन करते ही सुध बुध नहीं रहती है क्योंकि ऐसा झलकारा लगता है, अन्दर इतना रस भर जाता है तथा एक अकह रस, अकह आनन्द इस जीव को अनुभव होता है कि कुछ भी याद नहीं रहता। कोई संस्कार सुरत में नहीं आता, बुद्धि की सोचने वाली शक्ति, यहाँ गायब हो जाया करती है। बुद्धि में निर्णय लेने की शक्ति अलोप हो जाया करती है। सुरत को सूझबूझ न रही और सोच विचार में ध्यान धरने की हिम्मत न रही, ज्ञान में ज्ञान न रहा, जो कुछ अब तक ज्ञात हुआ था, वह सारे का सारा ज्ञान समाप्त हो गया तथा बात की गहराई तक पहुँचने अथवा प्रवृत्त होने वाली शक्ति थी, उसकी गति न रही। धीरज का धीरज, हंगता का अहंभाव मिट गया, केवल प्यार रह गया तथा प्रतिष्ठा (मनुष्य को गौरव की आन) लथपथ होकर लड़खड़ाती हुई समाप्त हो गई। एक अदभुत रस में लीन हो गया। आश्चर्य से ही आश्चर्यजनक स्वरूप. आश्चर्यजनक हैरानी में डालने वाली दशा से भी अत्यन्त चमत्कार करने वाली दशा में लीन हो गई। इस अभेद अवस्था का जो आनन्द है, महाराज जी फ़रमान करते हैं कि जब वाहिगुरू जी का मिलाप हुआ, वह दशम द्वार में ही प्रकट हो गये, तो महान आनन्द की प्राप्ति हुई। यह महान कृपा गुरू रूप सन्तों ने की। अब अनुभव की सेज पर रौनकें लग गईं। अनेक प्रकार के प्रकाश, अनेक प्रकार की संगीत की लहरों के बाजे बज रहे हैं और सारे दुखों का अन्त हो गया है। भाई गुरदास जी इस अवस्था का वर्णन करते हुए फ़रमान करते हैं -

दरसन देखत ही सुध की न सुध रही
बुधि की न बुधि रही मति मैं न मति है।
सुरति मैं न सुरति अउ धयान मैं न ध्यान रहयो।
ज्ञान मै न ज्ञान रहयो गति मैं न गति है।
धीरज को धीरज गरब को गरब गयो
रति मैं न रति रही पति रति पति है।
अदभुत परमदभुत बिसमै बिसम
असचरजै असचरज अति अति है॥
अंग - 34 (कवित्त सवेयै भाई गुरदास जी)

अब हृदय रूपी सेज सुहावनी हो गई, दुखों का अन्त हो गया। जन्म जन्मातरों से लगी हुई प्रभु मिलाप की इच्छा, गुरू की कृपा से प्राप्त हो गई क्योंकि समरथ गुरू ने वह घर दिखा दिया, जहाँ मेरे प्रभु का सदीवी निवास है। समरथ गुरू की यही पहचान हुआ करती है -

घर महि घरु देखाइ देइ
सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु।
पंच सबद धुनिकार धुनि
तह बाजै सबदु नीसाणु।
दीप लोअ पाताल तह
खंड मंडल हैरानु।
तार घोर बाजिंत्र तह
साचि तखति सुलतानु।
सुखमन कै घरि रागु
सुनि सुंनि मंडलि लिव लाइ।
अकथ कथा बीचारीऐ
मनसा मनहि समाइ।
उलटि कमलु अंम्रिति भरिआ
इहु मनु कतहु न जाइ।
अजपा जापु न वीसरै
आदि जुगादि समाइ।
सभि सखीआ पंचे मिले
गुरमुखि निज घरि वासु।
सबदु खोजि इहु घरु लहै
नानकु ता का दासु॥ *अंग - 1291*

अब सारी संगिनी - सहेलियां जीव रूप स्त्री के साथ मिल

कर वादी-ए-नूर में मंगल गीत गा रही हैं। सारी सुरतें, वृत्तियां, कर्मेन्द्रियां मिल कर, इस निज घर के गुण गा रही है-

सभि सखीआ पंचे मिले
गुरमखि निज घरि वासु।
सबदु खोजि इहु घरु लहै
नानकु ता का दासु॥ *अंग - 1291*

यह जीव आत्मा हैरान हो गई कि वाहिगुरू जी जैसा तो कोई है ही नहीं, जिन्होंने मेरी यह दुनियां भी संवार दी और दरगाह में भी निश्चल जगह बख्श दी। अब संसार के भयानक समुद्र में गोते खाने के लिये जन्म मरण का चक्कर भी समाप्त कर दिया। जिभ्या मेरी एक है, तेरे गुण बेशुमार हैं, मैं कैसे तेरे गुण गाऊँ? वाहिगुरू जी को नित्य ही गुणगान करना उचित है, चाहे उसे एक तिल के समान भी इच्छा नहीं है, उसके गुण गाने में ही जीव का भला है।

मिलि सहीआ मंगलु
गावही गीत गोविंद अलाइ।
हरि जेहा अवरु न दिसई
कोई दूजा लवै न लाइ।
हलतु पलतु सवारिओनु
निहचल दितीअनु जाइ।
संसार सागर ते रखिअनु
बहुड़ि न जनमै धाइ।
जिहवा एक अनेक गुण तरे
नानक चरणी पाइ।
फलगुणि नित सलाहीऐ
जिसनो तिलु न तमाइ॥ *अंग - 136*

नाम की महिमा बताते हुये आप फ़रमान करते हैं कि जिस-जिस ने भी नाम अपने ध्यान में बसा लिया है, उसके दोनों जहानों के कार्य वाहिगुरू आप पूरा करते हैं। पूरा गुरू आराधने से दरगाह में पवित्र समझ कर आदर मिलता है, सारे सुखों का भण्डार वाहिगुरू जी की याद में सन्निहित है और उनकी याद हृदय में बसाने से महाभयानक भवजल से तर जाता है। भक्ति करके, हरि गुण गाकर, श्रवण, सुमिरन, प्रार्थना करके, हमें प्रेमा भक्ति प्राप्त हो जाती है तो माया पुनः हमें अपने जाल में नहीं फंसा सकती। यह जो माया जाल है, इसका मिथ्यापन प्रकट होकर, सदीवी एक ही वाहिगुरू हर जगह पर दृष्टिगोचर होता है। सो जिन्होंने इस परमेश्वर को हृदय में बसा लिया है तथा उनकी सेवा करते हैं, उन पर वाहिगुरू जी की कृपा हो जाया करती है। उसके लिए महीने, दिन, मुहुर्त, विघ्नकारी नहीं होते, उन्हें अच्छे बुरे दिन गिनने की, परखने की कोई जरूरत नहीं होती। उनके लिए सभी दिन शुभ हुआ करते हैं, जितने भी विघ्न होते हैं, वे सारे के सारे उन्हें लगते हैं, जिन्होंने प्रभु प्यारे को भुला कर जिन्दगी के अन्धकार में धक्का खाया है। अन्त में गुरू महाराज जी हमें प्रार्थना करने की तरकीब बताते हुए फ़रमान करते हैं कि हे वाहिगुरू जी! हम भूले भटके हुये जीवन हैं, आप हम पर कृपा करके हमें पूर्ण तत्व वेत्ता, समरथ गुरू का मिलाप बख्शो, अपने प्यारों के दर्शन बख्शो, हमारे अन्दर मायिक सूझ की जगह आप जी का नाम बस जाये और उसमें लीन हो जाएं और जो हमारे मुख्य उद्देश्य प्रभु प्राप्ति का है, वह पूरा हो जाये-

जिनि जिनि नामु धिआइआ
तिन के काज सरे।
हरिगुरु पूरा आराधिआ
दरगह सचि खरे।
सरब सुखा निधि चरण हरि
भउजलु बिखमु तरे।
प्रेम भगति तिन पाईऐ
बिखिआ नाहि जरे।
कूड़ गए दुबिधा नसी
पूरन सचि भरे।
पारब्रहमु प्रभु सेवदे
मन अंदरि एकु धरे।
माह दिवस मूरत भले
जिस कउ नदरि करे।
नानकु मंगै दरस दानु
किरपा करहु हरे॥ *अंग - 136*

समुच्चय बारह मास में आई गुरबाणी, इस कर्तव्य कर्म के कारण विछुड़े जीव को, जो करोड़ों वर्षों से चौरासी के चक्कर काटता, अति दुखी हो रहा था, को प्रभु मिलाप की लगन लगाता है। चेत की महीने द्वारा प्रकट होता है कि गोबिंद की आराधना करने से अति आनन्द मिलता है। यह आनन्द सन्तों को मिलकर प्राप्त होता है। संसार में आना उन जीवों का सफल है जो प्रभु को प्राप्त कर लेते हैं, प्रभु मिलाप के बिना मानस जन्म व्यर्थ है। यह प्रभु जल-थल, पर्वतों वनों में एक रस परिपूर्ण है। यदि उस प्रभु को नहीं मिलते तो कितना दुख होता है? भाग्यशाली हैं वे जिन्होंने प्रभु प्राप्ति कर ली है। यह जान कर जीव के अन्दर इच्छा जाग्रत होती है कि मुझे भी दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हो जाये। इसी प्रकार हर महीने में, विधि बताते हुए, सन्त महिमा, नाम महिमा बताते हुए फाल्गुन के महीने में प्रभु को प्राप्त करने का महत्व बताया गया है।

बाबाणियाँ कहानियाँ

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जनवरी, अंग - 28)

दूसरी सिद्धि अपने शरीर को इतना बड़ा बना लेना कि देखते ही देखते सैकड़ों फुट ऊँचा हो जाना, बहुत भार बढ़ा लेना, इसे 'महिमा सिद्धि' कहा जाता है।

तीसरी सिद्धि रूई जैसे हल्के-फुल्के पदार्थ को इतना भारी बना देना कि वह किसी से भी उठाया न जा सके। इस प्रकार अपने शरीर को इतना भारी बना लेना कि कोई भी उसका अंग न हिला सके। इसे 'गरिमा सिद्धि' कहा जाता है।

पर्वत समान पदार्थ का रूई के समान हल्का हो जाना इसे 'लघना सिद्धि' कहा जाता है।

जिस वस्तु की भी इच्छा करे चाहे वह संसार में किसी जगह भी क्यों न हो उसे प्राप्त कर लेना। इसे 'प्राप्त सिद्धि' कहा जाता है। यह प्रायः चालीसे रख कर भी प्राप्त हो जाती है।

एक बार की बात है कि चण्डीगढ़ में जब मैं सचिवालय में नौकरी करता था तो एक तान्त्रिक साधु लिबास में आया। उसके साथ कई व्यक्ति थे। वह सरदार प्रताप सिंह कैरों जो उन दिनों मुख्य मन्त्री थे, से मिलने के लिये कार्यालय में आया। कहने लगा कि सरदार जी, बताइये आपको कौन सी चीज़ खिलाएं। सारी बात चीफ मिनिस्टर ने सुनी। उन दिनों जेठ आषाढ़ की गर्मी थी तो कहने लगे मुझे ताज़ा चने चाहिए। उसने अपने ऊपर डाले हुए कपड़े में हाथ डाला और दो बन्डल ताज़े नर्म नर्म चनों (छोलिया) के उसकी मेज़ पर रख दिए। इसी प्रकार एक बहुत नज़दीकी जानकार मिलट्री आफिसर थे। जब उनसे पूछा गया तो उन्होंने कहा कि मुझे गर्म गर्म रसगुल्ले चाहिए। उसने कहा थाल लेकर आओ उसके ऊपर कपड़ा डाल कर हाथ ऊँचा कर लो। जब तुम्हारे हाथ को गर्मी लगने लगे तब मुझे बता देना। उसी तरह किया गया जब कर्नल साहिब का हाथ गर्मी महसूस करने लगा तो उन्होंने कहा कि मेरे हाथ को गर्मी महसूस हो रही है। उस तान्त्रिक ने कहा कि तुम अपना हाथ कपड़े से बाहर निकाल लो। थाल के ऊपर से कपड़ा उठा लो और मन चाहे रसगुल्ले खाओ। इस प्रकार अनेक ऐसे साधुओं का ज़िक्र आता है। सन्त भाई मनी सिंह जी दियालपुर वाले, आपके पास संगतें मस्तुआणे से जाया करती थीं आपने उनके भोजन के लिए एक वृक्ष से बहुत बढ़िया किस्म की मिठाई झाड़ कर बांटी। इसे 'प्राप्ति सिद्धि' कहते हैं।

जैसे पानी में गोता लगाया जाता है और फिर दूर जाकर निकल आते हैं इसी प्रकार पृथ्वी में गोता लगाकर और जगह पर निकल आना। इस सिद्धि का नाम 'प्रकारमय सिद्धि' है।

सारे भौतिक पदार्थों को अपने वश में कर लेना। पदार्थों को रचने तथा लय करने की शक्ति होना। अपनी इच्छा के अनुसार जिस पदार्थ की भी जरूरत हो उसी समय बना लेना। ये आठ सिद्धियां मुख्य हैं। दस सिद्धियां गौण है जिन्हें मिलाकर कुल 18 सिद्धियां हुआ करती हैं। भूख, प्यास, धूप, पाला आदि कोई भी कष्ट न व्यापना इसे ''मानरूपी सिद्धि'' कहा जाता है। इसके बाद कोई प्रेमी 10-12 हज़ार मीलों की दूरी पर बैठा है उसके गुप्त वचन स्वंय सुन लेने। इसे ''श्रवण सिद्धि'' कहते हैं यह दसवीं सिद्धि हुआ करती है।

हज़ारों मीलों की दूरी पर बैठे बैठे सभी कुछ अपनी आँखों से प्रत्यक्ष देख लेना। इसके बारे में मैं अपनी आप-बीती बताना चाहता हूँ। वह इस प्रकार है कि जब मेरी पत्नी रणजीत कौर (ऊदम कौर) पिता जी के पास लाहौर रहा करती थीं जिन्हें भाई साहिब भाई रणधीर सिंह जी ने सन्त भाई हीरा सिंह जी दाऊदपुरी के नाम से लिखा है वह अमृत बेला में लिव में मस्त बैठे थे। अपने नेत्र खोले और बच्चों को कहा कि एक सिख आ रहा है, उसके लिए दरवाज़ा मत खोलना। घन्टे दो घन्टे के बाद वास्तव में ही एक सिंह आया उसने दरवाज़ा खट खटाया तो बच्चों ने कहा कि बापू

जी का हुक्म है कि दरवाज़ा नहीं खोलना। वह सिंह कहने लगा कि मैं तो मुम्बई से आया हूँ, महापुरुषों के दर्शन करके अपने घर वापिस जाना है। उसकी ऐसी प्रेम पूर्वक बातें सुनकर बच्चों ने दरवाज़ा खोल दिया। पिता जी **first floor** (पहली मंज़िल) पर अपने निजी कमरे में बैठे थे। जब वह सिख उनके सामने आया तो बापू जी ने कड़क कर कहा, ''गुरमुख! तू गुरू दशमेश पिता का अति उत्तम तथा आदरणीय बाना पहन कर कितने नीच कर्म करता रहा है। तूने उसकी सिखी के आचरण को बहुत बुरा कलंक लगाया है। तुझे शर्म नहीं आई, ऐसे नीच कर्म करते हुए। यदि मैं तुझे लाहौर में बैठा देख सकता हूँ तो तेरा क्या ख्याल है कि तेरी करतूतें दशमेश पिता जी से छिपी हुई हैं?'' वह प्रेमी चरणों में गिर पड़ा और रोये जाये तथा एक ही बात कहे जाता कि मुझे माफ कर दो मेरे से बहुत बड़ी भूल हो गई है।

इसी प्रकार की एक आपबीती हमारे साथ भी घटित हुई है। बीबी रणजीत कौर जी का स्वास्थ्य काफी खराब था डा. स्वामी राम जी ऋषि केश वाले जो बाबा जी (लेखक) तथा बीजी को अति श्रद्धा पूर्वक तथा अपनत्व के साथ जानते थे, उन्होंने दवाई दे दी और कहा कि यह दवाई थोड़े थोड़े अन्तराल के बाद दिन में चार बार लेनी है। सोने से पहले जरूर लेनी है इस दिन हमें पूर्णमाशी के दीवान से, जो गुरूद्वारा ईश्र प्रकाश रतवाड़ा साहिब में लगाया था, आते हुए देर हो गई और हम बहुत थक गए थे। रात को साढ़े नौ बजे बीजी अपने बिस्तर पर जाकर सो गये। उसी समय हमें डाक्टर तजिन्दर मल्होत्रा जी का फोन आया। उन्होंने कहा कि अभी अभी ऋषिकेश से श्री रछपाल मल्होत्रा जी जो उनके पतिदेव हैं, के पास टैलिफोन आया है डाक्टर स्वामी राम जी ने उन्हें कहा है कि माँ, बिना दवाई खाये अपने बिस्तर पर सो गई है। उन्हें कहो कि वह उठकर दवाई ले लें। उस समय बीजी को जगाया गया। सारी बात बताई और दवाई खाई। इस सिद्धि को 'दर्शन सिद्धि' कहा जाता है। इसके बाद बहुत ही अलौकिक सिद्धि हुआ करती है। आप किसी दूर क्षेत्र में घूम रहे हैं। आपके मन में आया कि मैं किसी दूर देश या शहर में जाना चाहता हूँ। अपनी इच्छानुसार उसी समय वहाँ पहुँच जाना, इसे ''मनोवेग सिद्धि'' कहा जाता है।

नामधारी सम्प्रदा में एक महात्मा मोहन जी मस्ताना हुए हैं। आप गुरदासपुर में परम आदरणीय महापुरुष बाबा प्रताप सिंह जी के जत्थे का कीर्तन श्रवण कर रहे थे। वहाँ कीर्तन समाप्ति पर जब आप भैणी साहिब वापिस विदा होने लगे, उस समय मस्ताना जी ने महापुरुषों को कहा कि अपनी कार में मुझे भी बिठा ले चलो। महापुरुषों ने कहा कि गुरमुख! कार में और जगह नहीं है। जब आप भैणी साहिब पहुँचे तो क्या देखते हैं कि सन्त मोहन दास जी का कीर्तन हो रहा है और काफी सारी संगत कीर्तन सुन रही है। उस समय आपने पूछा कि यह कितनी देर से यहाँ पहुँचा हुआ है? तो सेवादारों ने कहा कि महाराज! इसे कीर्तन करते हुए तीन घंटे हो चुके हैं। यह हमें नहीं मालूम कि यह यहाँ कब पहुँचे थे। इसी प्रकार मैं पीछे भी इस लेख में बता आया हूँ कि बाबा ज्वाला सिंह जी अपने वचनों में बन्धे हुए गाँव कोठे से रामगढ़ में भाई करतार सिंह के अन्तिम समय पर पहुँचे थे।

एक बार नामधारी सम्प्रदा के वर्तमान सतगुरू महापुरुष बाबा जगजीत सिंह जी मेरे साथ वचन करते हुए बता रहे थे कि जब बाबा राम सिंह जी माण्डले की जेल में अंग्रेजों ने कैद कर लिए तो उन्हें सन्देशे देने तथा उनसे आज्ञा लेने के लिए बहुत सारे सिख चले जाया करते थे। उनमें से एक सिंह ऐसा था जो इस शक्ति का प्रयोग करके सारे हुक्म ले आया करता था। चाहे महापुरुषों ने उसे कई बार मना भी किया था कि गुरू नानाक पातशाह ने इन शक्तियों का प्रयोग करने के लिये गुरसिखों को मना किया हुआ है पर फिर भी समय समय पर सिख शक्ति का प्रयोग कर ही रहे थे। भाई जेठा जी और भाई पराणां जी जहांगीर के शयन कक्ष (**Bed Room**) में जाकर शेर का रूप धारण करके उसकी छाती पर चढ़ कर मनुष्यों की तरह कहा करते थे कि गुरू महाराज जी को ग्वालियर के किले में से पूरे आदर सम्मान के साथ लेकर आओ, अन्यथा हम तुम्हें मार देंगे। जहाँगीर को गुरू छठे पातशाह जी को 52 राजाओं सहित ग्वालियर के किले में से बाहर लाना पड़ा। चाहे गुरू महाराज जी ने इसे पसन्द नहीं किया था। गुरू महाराज जी ने भाई जेठा जी को कहा, जमुना में से एक पानी की बाल्टी भर कर लाओ और फिर कहा, पानी जमुना में ही वापिस फैंक आओ। जब वह आया तो गुरू महाराज जी ने कहा कि पानी की बाल्टी निकाल लेने से क्या नदी का पानी कम हो गया था और जब तूने

दोबारा उंडेल दिया तो क्या जमुना का पानी बढ़ गया था? आपने फरमाया कि गुरू घर में अथाह शक्तियों का प्रवाह है जिसका अनुमान ही नहीं लगाया जा सकता। हम अपनी मौज़ में उन राजाओं के कल्याण के लिये रुके हुए थे। हम अपनी मर्जी अनुसार यह कर रहे थे। आपको यह शक्ति नहीं दिखानी चाहिए थी। सो इस प्रकार अनेका नेक गुरसिखों में शक्तियाँ प्रवेश हो जाया करती हैं परन्तु वे इन्हें साधारण मनुष्य की तरह ही प्रयोग किया करते हैं। मैं बता रहा था उस नामधारी सिख के बारे में, परम आदरणीय महापुरुष जगजीत सिंह जी कहने लगे कि उसे अंग्रेजों ने पकड़ लिया। पूरी तरह से हथकड़ियाँ और जन्ज़ीरों में बान्ध दिया और साथ ही कहने लगे कि हमने सुना है कि तू उड़ कर सभी जगह जा सकता है और तू माण्डले से बाबा राम सिंह जी से सन्देशे लेकर आता है। उस सिंह ने दो चार बार मना किया कि मैं तो कुछ भी नहीं कर सकता। जब वे बड़े अधिकारी बार बार यही बात दोहराते और साथ ही साथ यह भी कहते कि अब भाग कर दिखा, किस तरह से हथकड़ियों और बेड़ियों में से निकल कर भागेगा। उसने एक शब्द 'सतिनाम' बोला और कहने लगा कि हम चलते हैं, हथकड़ियाँ और बेड़ियाँ वहीं धरी रह गईं। वे हैरान रह गये कि वह आदमी कहाँ चला गया। सो ऐसी सिद्धियाँ गुरसिखों में अक्सर हुआ करती थीं। जहाँ जाना चाहते चले जाया करते थे। इसे 'मनोवेग सिद्धि' कहा जाता है। इसी प्रकार जैसी इच्छा हो वैसा ही स्वरूप धारण कर लेना। यह सिद्धि दूर भूत काल के आदि वासी आम प्रयोग किया करते थे। महाभारत में एक कथा आती है कि जब पाँचों पाण्डव पिन्जौर के पास बने लाक्षागृह के महल में आग लगने से पहले सुरंग में से निकल कर पास ही खुले स्थानों पर झौपड़ियाँ बना कर अपना बनवास बिता रहे थे। ऐसा अनुभवी महापुरुषों से सुना जाता है कि जहाँ आजकल रतवाड़ा साहिब की इमारत बनी हुई है यहाँ नदी बहुत ही धीमी गति से हर समय बहा करती थी और इसके किनारे वे अपना बनवास बिता रहे थे। एक दिन भीम घणूआं गाँव के जंगलों में घूम रहा था, क्या देखता है कि यहाँ के आदिवासी की लड़की भी जंगल में से फूल तोड़ रही थी। भीम सैन के देखते ही देखते उसने बहुत सुन्दर रूप धारण कर लिया और अपने पिता की अनुमति लेकर इसके साथ शादी करने की इच्छा प्रकट की। भीम सैन एक वर्ष इस परिवार के साथ रहा। इस प्रकार धटोत्कच का जन्म हुआ।

उस गाँव को यहाँ के लोग बताते हैं कि उस बच्चे के नाम से ही जाना जाने लगा जो अब धीरे धीरे बिगड़ते बिगड़ते आजकल घणूआं बन गया। सो इस प्रकार अपनी मर्जी के अनुसार जैसा भी स्वरूप मन करे, किसी पंछी का, किसी पशु का रूप धारण कर लेना उसे ''काम रूप सिद्धि'' कहा करते हैं। गुरू नौवें पातशाह जी जब राजा राम सिंह की प्रार्थना स्वीकार करके दुबड़ी घाट पधारे तो टैन्ट में आपने निवास किया तो वहाँ का जादूगर जो दूसरे राजा से सम्बन्ध रखता था एक कबूतर का रूप धारण करके गुरू महाराज जी के टैन्ट पर बैठ कर सारे भेद लेने लगा। उसका नाम नगीना था। गुरू महाराज जी ने हुक्म देकर उसे कब्ज़े में कर लिया और उसने भी मनुष्य रूप धारण करके नमस्कार की कहने लगा सच्चे पातशाह! सारे भारत वर्ष में मुगलों का राज्य हो गया है केवल एक हमारा ही राज्य बचा है जहाँ हम अपनी मर्यादा में रह रहे हैं। आप जी के आने से पहले हम इन्हें अपने जादू के बल पर रिद्धियाँ सिद्धियाँ प्रयोग करके यहाँ से भगा दिया करते थे पर आप जी के आने से हमारी शक्ति कमज़ोर पड़ गई है, अब आप कृपा करो। गुरू महाराज जी ने दोनों राजाओं की सन्धि करवा दी। इस प्रकार किसी के शरीर में प्रवेश कर जाना, प्राचीन योगियों के समय में ऐसा प्राय हुआ करता था जिस प्रकार मच्छन्दर नाथ राजा अमरू के शरीर में प्रवेश करके 14 वर्ष तक विषय विकारों में मस्त रहा। इसे 'पर काया प्रवेश सिद्धि' कहते हैं। इसके बाद एक और सिद्धि हुआ करती है जिसके अनुसार संसार को अपनी मर्जी से छोड़कर जाता है। जैसे भीष्म पितामह तीरों से बीन्धे हुए कई महीने तक तीरों की सेज पर जीवित पड़े रहे और अपनी मर्जी से शरीर त्याग किया। इसे 'स्वच्छन्द मृत्यु सिद्धि' कहते हैं। इससे भी अधिक विलक्षण एक और सिद्धि हुआ करती है कि संसार में से अपने शरीर में से निकलकर स्वर्ग लोकों में अप्सराओं से मिलकर प्रेम क्रीड़ाएं करना और देवताओं के लोक देखने इसे 'सुर क्रीड़ा सिद्ध' कहते हैं। सत्रहवीं सिद्धि 'संकल्प सिद्धि' हुआ करती है जो कोई भी बात दिल में धारण करना वह पूरी हो जाना। एक सिद्धि और हुआ करती है जिसे 'अपृहितगत सिद्धि' कहा करते हैं। जहाँ भी जाने की इच्छा हो वहीं पर बिना विलम्ब किए पहुँच जाना। ये अठारह सिद्धियाँ हुआ करती हैं जो बन्दगी करने वाले को स्वत: सिद्ध सहंसरार दल कमल में सुरत के गमन करने पर आवाज़ देकर अपने बारे में बताया करती हैं यहाँ

बड़े बड़े साधक उलझ जाया करते हैं और यह सूक्ष्म माया साधक को मोह लेती है। गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया है -

रिधि सिधि सभु मोहु है
नामु न वसै मनि आइ। अंग - 593

बिनु नावै पैनणु खाणु सभु बादि है
धिगु सिधी धिगु करमाति।
सा सिधि सा करमाति है
अचिंतु करे जिसु दाति।
नानक गुरमुखि हरि नामु
मनि वसै एहा सिधि एहा करमाति॥ अंग - 650

सो सन्त महाराज जी कहने लगे कि जिज्ञासु के लिए यह अति उलझन भरा समय हुआ करता है। जब हमने उनकी आवाज़ पर कोई ध्यान न दिया तो यह रूप धारण करके स्त्रियों के रूप में हाथ जोड़ जोड़ कर प्रार्थनाएं करने लगीं पर हमारे हृदय में प्यारे प्रीतम के मिलाप का इतना जबरदस्त वैराग था कि उसके बिना एक पल भर भी रह पाना भी ऐसा था -

इक घड़ी न मिलते ता कलिजुगु होता।
हुणि कदि मिलीऐ प्रिअ तुधु भगवंता।
मोहि रैणि न विहावै नीद न आवै
बिनु देखे गुर दरबारे जीउ॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई
तिसु सचे गुर दरबारे जीउ॥ अंग - 96

हमें नाम के बिना संसार में कुछ भी अच्छा नहीं लगता था। रिद्धियाँ-सिद्धियाँ हमें एक बहुत ही भूल-भुलैया में डालने वाली शक्तियाँ प्रतीत हुआ करती थीं। जब हम अपनी मंज़िल की ओर बढ़े और नाम मण्डल में प्रवेश करके पाँचों भ्रमों का नाश हो गया तो प्रत्यक्ष रूप में हर तरफ एक ही प्रभु के दर्शन का झलकारा बजने लगा। उस समय सिद्धियाँ दासी बनकर सेवा करने लगीं। महाराज जी क़ा फरमान है -

नवनिधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि
जो हरि हिरदै सदा वसाइ। अंग - 649

महात्मा इनसे बहुत कम ही काम लिया करते हैं पर परोपकार वश इनका प्रयोग करने में कोई संकोच भी नहीं हुआ करता। जिस प्रकार महापुरुष बाबा बीर सिंह जी ने अटक नदी के उछलते हुये प्रवाह को कुछ देर के लिये शान्त करके खालसा फौज़ों को दरिया से पार करवा दिया था। पूर्ण महापुरुषों की देख रेख के बिना जिज्ञासु रिद्धियाँ-सिद्धियाँ, नौ निधियों में फंस जाया करता है। अपनी ऊँची मंज़िल प्राप्त करके नीचे गिर जाया करता है। चौथी प्रकार की माया वह माया है जिसमें सारे देवी-देवता, पशु पक्षी, संसार फंसा हुआ पैदा होता है और मरता है। यह माया अति प्रबल है। यह अनादि नहीं है, यह मेरे मालिक की मर्जी अनुसार ही रची गई है। एक खेल में इसे पात्र बना कर एक नाटक किया जा रहा है। वह प्रभु स्वंय ही खेल करता है जैसा कि गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया है -

बाजीगरि जैसे बाजी पाई।
नाना रूप भेख दिखलाई।
सांगु उतारि थंम्हिओ पासारा।
तब एको एकंकारा॥ अंग - 736

'चलता'

आवश्यक निवेदन

रिन्युवल का चन्दा भेजने के लिए मेंबरशिप नम्बर (सदस्यता संख्या) तथा रिन्युवल तारीख (पुनर्नवीनीकरण तिथि) का व्यौरा अवश्य दिया जाए तथा यह भी बतलाया जाए कि चन्दा, रिन्युवल के लिए है अथवा नई मेंबरशिप प्राप्त करने के लिए प्रेषित किया गया है।

यदि किसी प्रेमी पुरुष ने आत्म मार्ग मैगजीन के लिए चन्दा जमा करवाया हो और उसे मैगजीन न पहुँच पा रहा हो, तो उसे जमा करवाई गई रकम का रसीद नम्बर आदि लिखकर आत्म मार्ग कार्यालय से सम्पर्क करना चाहिए।

'आत्म मार्ग' एक धार्मिक मैगजीन है, इसके अन्तर्गत श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी छपी हुई होती है, इसलिए समस्त पाठक बन्धुओं से अनुरोध है कि कृप्या इसका प्रयोग रद्दी पेपर की भांति न किया जाए। यदि आप पुराने मैगजीन को रखना नहीं चाहते हैं तो उन्हें हमारे किसी भी वितरण केन्द्र पर सहर्ष वापिस कर सकते हैं।

पड़िऔ नाही भेदु बुझिऔ पावणा।।

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

सतिनामु श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज।

डंडऊति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ॥
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥
अंग - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तऊ सरनाइ॥
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥
अंग - 289

अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखनहारा ॥
नाना रूपु धरे बहु रंगी सभ ते रहै निआरा ॥
अंग - 537

धारना - एको कहीऔ नानका, दूजा काहे कू।

जैसे एक आग ते कनूका कोट आग ऊठे,
निआरे निआरे होइ कै फेरि आग मै मिलाहिंगे॥
जैसे एक धूर ते अनेक धूर पूरत हैं,
धूरि के कनूका फेर धूरि ही समाहिंगे॥
जैसे एक नद ते तरंग कोट ऊपजत है
पान के तरंग सबै पान ही कहाहिंगे॥
तैसे बिस्व रूप ते अभूत भूत प्रगट होइ
ताही ते ऊपज सबै ताही मै समाहिंगे॥
अकाल ऊसतति

साधु संगत जी! उच्च स्वर में बोलो जी, सतिनाम श्री वाहिगुरू। आप सभी अपने व्यवसायिक कार्यों को विराम देते हुए गुरू दरबार में पहुँचे हो। महाराज जी का फुरमान है कि-

आपे पटी कलम आपि ऊपरि लेखु भि तूं ॥
एको कहीऔ नानका दूजा काहे कू ॥ अंग - 1291

बहुत बड़ा उपदेश उत्तम जिज्ञासुओं के लिए है। यदि कोई कहे कि मैं बहुत पढ़ा-लिखा हूँ, मैंने बहुत ग्रन्थ पढ़े हैं, मैंने बहुत साधनाएँ की हैं। ये उपदेश उनके लिए नहीं हैं क्योंकि श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर तीन श्रेणियों के उपदेश हैं। यह बात हमें अच्छी तरह से समझ लेनी चाहिए। जिस प्रकार से सांसारिक पढ़ाई पढ़ने के लिए दर्जा-ब-दर्जा पुस्तकों का पाठ्यक्रम हुआ करता है। इसी प्रकार से रूहानी पढ़ाई पढ़ने के लिए पृथक-पृथक अवस्था के अनुसार उपदेश हुआ करता है। सयाने लोगों ने इन्हें चार दर्जों में बाँटा है। दूसरी तरफ मानसिक बुद्धि के हिसाब से संसार में रहकर कार्य करना और उसका फल भोगना, इसे भी चार भागों में बाँटा गया है। पहले भाग में वह उपदेश है जो कि शरीअत में दिया जाता है अथवा यूँ समझ लो कि पाँचवीं कक्षा में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को उपदेश दिया जाता है। वह कर्म का उपदेश हुआ करता है। निन्दा न करो, चुगली न करो, ईर्ष्या न करो, किसी के साथ वैर मत करो, किसी का विरोध मत करो, लालच न करो, धोखा न दो, कपट न करो, किसी के धन को लेकर उसे दबाओ नहीं, किसी से भी विश्वासघात न करो, हिंसा मत करो। इस प्रकार से बड़ा कुछ है और साथ ही लिखा होता है कि यदि इस प्रकार के कर्म करोगे तो अमुक फल मिलेगा क्योंकि मरणोपरान्त तुम्हारे एक-एक कर्म का हिसाब होना है। उस समय हमारी यह आत्मा मरती नहीं है बल्कि इसी प्रकार से ही रहती है। हाँ कुछ चीजें उसके पास से अवश्य चली जाती हैं -

मूई सुरति बादु अहंकारू ॥ अंग - 152

एक तो सांसारिक सुरति मर जाती है और दूसरा झगड़े आदि समाप्त हो जाते हैं तथा तीसरा जो अपनी कुर्सी का अभिमान करता है, पढ़ाई या धन का अभिमान करता है, यह सब वहाँ पर किसी काम नहीं आता है -

ओहु न मूआ जो देखणहारू ॥ अंग - 152

दूसरी तरफ जो असली चीज है, वह नहीं मरती है। महाराज जी कहते हैं कि प्रेमीजनो! हमारे द्वारा जो कार्य किए गए होते हैं, चाहे वे अच्छे कर्म हों या बुरे कर्म हों वे सब गिने जाते हैं। अब यदि वे कर्म अच्छे होते हैं तो वह खुशी में आता है और यदि बुरे हों तो फिर परेशानी में आ जाता है -

धारना - जिंदे रोवेंगी ते रो-रो पछोतावेंगी,
फेर तेरा कोई ना बणे।

आपीनै भोग भोगि कै होइ भसमड़ि भऊरू सिधाइआ॥

वडा होआ दुनीदारू गलि संगलु घति चलाइआ ॥ अगै करणी कीरति वाचीऐ बहि लेखा करि समझाइआ ॥ थाऊ न होवी पऊदीओ हुणि सुणीऐ किआ रूआइआ ॥ मनि अंधै जनमु गवाइआ॥ *अंग - 464*

ऐसा उपदेश गुरू जी देते हैं। दरअस्ल व्यक्ति ने कर्मों में तो प्रवृत्त होना ही है और संसार में विचरण करते हुए इस व्यक्ति को तीन दोष लग जाते हैं। एक को मल कहते हैं, दूसरे को विषशेप और तीसरे को आवरण कहते हैं। सरल जुबान के अन्दर मल उन कर्मों की मैल को कहते हैं, जिनके द्वारा व्यक्ति परमात्मा से बिछुड़ कर बहुत दूर चला गया है, जिन कर्मों को करने के कारण इसके अन्दर से प्रकाश मिट गया है और अंधेरा छा गया है। कोई विरला व्यक्ति है जिसके मन के अन्दर प्रकाश है अन्यथा चहुँओर अन्धकार ही छाया हुआ है। दरअस्ल माया कहते ही अंधेरे को हैं, गुबार को हैं। अब अन्धकार का प्रभाव यह होता है कि उसे साथ में रहता हुआ परमात्मा दिखाई नहीं पड़ता है और वह उससे कोसों दूर हो जाता है। इसी चीज को मल कहते हैं -

जनम जनम की इसु मन कऊ मलु लागी
काला होआ सिआहु ॥
खंनली धोती ऊजली न होवई
जे सऊ धोवणि पाहु ॥ *अंग - 651*

यदि बाहरी तौर पर तो व्यक्ति अच्छे से अच्छे कपड़े पहन कर या अच्छे से अच्छे इत्रादि व सजावटें आदि लगाकर घूमता है और आन्तरिक तौर से मैला ही है तो इससे कोई क्रान्ति आ जाने की सम्भावना नहीं है। हाँ, जन साधारण की दृष्टि तो उससे धोखा खा सकती है लेकिन वास्तविक तौर पर तो उनके अन्दर मैल ही जमी हुई होती है और मैल भी कम नहीं होती है क्योंकि इस जीव को मैल तो जन्म जन्मान्तरों से लगी हुई है। इस मैल का वर्णन करने के लिए गुरू जी 'काला' अक्षर का प्रयोग करने के साथ ही उसके साथ स्याह भी जोड़ते हैं यानि कि इस जीव के मन पर इतनी मैल आ चुकी है कि जिसके कारण वह काला स्याह हो चुका है और अब उसे धोकर साफ कर पाना अत्यन्त कठिन हो चुका है। यथा-

खंनली धोती ऊजली न होवई जे सऊ धोवणि पाहु।

तेल के कोल्हू के मैले कपड़े को 'खनली' कहा जाता है। उसके अन्दर सरसों के तेल का कड़ुवापन व पीलापन इतना रच जाता है कि उसे दोबारा सफेद कर पाना असम्भव हो जाता है। वेशक उसे सौ बार ही क्यों न धो दिया जाए।

यह एक उदाहरण है ताकि हम स्थिति को ठीक प्रकार से समझ जाएँ। इस प्रकार से हम अपने सफर को तय कर रहे हैं और बहुत लम्बे समय से हमारी यह यात्रा जारी है -

कई जनम भए कीट पतंगा ॥
कई जनम गज मीन कुरंगा ॥
कई जनम पंखी सरप होइओ ॥
कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ ॥ *अंग - 176*

गुरू जी की बात सुनकर हैरानी होती है कि हम इस प्रकार की निषिद्ध योनियों में से चलकर आए हैं। हम वृक्ष भी बने हैं, पत्थर भी बने हैं। गुरू जी फुरमान करते हैं -

केते रूख बिरख हम चीने केते पसू ऊपाए ॥
अंग - 156

चौबीस लाख प्रकार की जड़ी-बूटियाँ व वृक्ष आदि हैं। इन सबके बीच से होती हुई हमारी आत्मा का विकास हुआ है। साढ़े सात लाख किस्म के वे जो पंखों के द्वारा उड़ते हैं, साढ़े सात लाख के वे जीव हैं जो कि पेट के बल चलते हैं, चार लाख किस्म के वे जीव हैं जो पैरों के द्वारा चलते हैं। किसी को दो पैर मिले हैं, किसी को चार तथा किसी को सौ पैर भी मिले हैं। वे अपना पेट धरती के साथ नहीं लगाते बल्कि पैरों के बल ही चलते हैं। इनके अतिरिक्त असंख्य अदृश्य योनियाँ हैं जो दिखाई नहीं पड़ती हैं जैसे कि भूत, प्रेत, पिशाच आदि। इनके अतिरिक्त पानी के अन्दर भी न जाने कितनी प्रकार की योनियाँ हैं। चार लाख किस्म के पत्थर हैं जिनके अन्दर जान या चेतनता है। दशमलव शून्य-शून्य एक तक का जीवन उनके अन्दर है, फलस्वरूप वे भी बढ़ते व घटते हैं। इसलिए महाराज जी कहते हैं -

मिलु जगदीस मिलन की बरीआ ॥
चिरंकाल इह देह संजरीआ ॥ *अंग - 176*

इसके बाद हम मनुष्य कितनी बार बने हैं, इसका भी कोई अनुमान नहीं है। गुरू जी कहते हैं कि तुम बहुत बार मनुष्य बने हो लेकिन प्रत्येक बार तुम गलती कर जाते हो और साधारण रूप से ही कर जाते हो क्योंकि अन्दर से रौशनी नहीं आती है, समझ नहीं आती है कि तुम अब गलत दिशा में आगे बढ़ रहे हो। जो लोग जागृतावस्था में हैं, उनके अन्दर संकेत आ जाते हैं कि तुम यहाँ पर गलत चल रहे हो। वह संकेत या मार्गदर्शन हमारे अनुभव की होता है और वह प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर नहीं हुआ करता है। दूसरी बात यह है कि एक आवाज परमात्मा के द्वार से हमारे पास तक आ रही है वह हमें बतलाती रहती है कि ऐ व्यक्ति! तुम यह कार्य गलत कर रहे हो। वह आवाज उस समय तक तो सुनाई देती है, जब तक परत-दर-परत मैल उसके ऊपर जम नहीं जाती यानि

कि अन्दर की आवाज को ढक-ढक कर बन्द नहीं कर दिया जाता है। जब वह आवाज बन्द हो जाती है तो कहा जाता है कि इसकी जमीर, आवाज देने से बन्द हो गई है, इसीलिए अब यह अपनी जमीर की आवाज सुनता ही नहीं है। फलस्वरूप हमारा समय बरबाद होता चला जाता है -

बैर बिरोध काम क्रोध मोह ॥
झूठ बिकार महा लोभ ध्रोह ॥
इआहू जुगति बिहाने कई जनम ॥
नानक राखि लेहु आपन करि करम ॥ अंग - 268

इस प्रकार से हम बहुत बार संसार पर आए हैं क्योंकि संसार के बारे में हमें पता ही नहीं है कि यह कब से शुरू हुआ है -

थिति वारू ना जोगी जाणै रूति माहु ना कोई ॥
जा करता सिरठी कऊ साजे आपे जाणै सोई ॥
अंग - 4

एक बात और भी है कि यह आवश्यक नहीं है कि इस शरीर के परित्याग करने के बाद दोबारा हमने इसी धरती पर ही आना है। महाराज जी कहते हैं कि धरतियों का भी कोई हिसाब-किताब नहीं है। कोई पता नहीं है कि कहाँ तक यह रचना फैली हुई है, किस प्रकार के लोग हैं, किस प्रकार के उनके शरीर हैं और किस प्रकार के उनके अनुभव हैं। बहुत सी जगहों पर तो मनुष्य ही नहीं है अतः यह सब रचना परमात्मा के द्वारा रची हुई है और असंख्य प्रकार की यह रचना है, इसके ऐसे-ऐसे भी रूप हैं, जिनके बारे में कोई सोच भी नहीं सकता है। गुरू जी कहते हैं कि जो यह कहता है कि मैंने सब कुछ जान लिया है, वह तो मूर्ख व्यक्ति है। यथा -

जे को आखै बोलुविगाड़ु ॥
ता लिखीऐ सिरि गावारा गावारू ॥ अंग - 6

वह तो मूर्खों का भी मूर्ख यानि कि शिरोमणी मूर्ख है क्योंकि जिसे जाना ही नहीं जा सकता है उसे, उसने कैसे जान लिया है -

लेखा होइ त लिखीऐ लेखै होइ विणासु ॥ अंग - 5

लेखा तो कहना भी गलत है और करना भी गलत है। कई लोगों ने लेखा करने की कोशिश भी की है। डा. स्टीफन ने लेखा करने में बहुत जोर लगाया। वह नोबल पुरुस्कार विजेता था और लन्दन का रहने वाला था। उसने समय और आकाश का नया सिद्धान्त गणित के हिसाब से संसार को दिया। जिस समय वह विस्तार में जाता है तो कितना विस्तार में जाता है -

जब ऊदकरख करा करतारा।
परजा धरत तब देह अपारा।

जब संसार को आकर्षण शक्ति खींच लेती है, तो गणित के हिसाब से उसने उसकी गणना करने की कोशिश की। उसने सारे फार्मूले लगाने के बाद लिख दिया - असीम। उसने दशमलव लगाने के बाद अस्सी शून्य लगाए और उसके बाद एक लिख दिया तथा उसके बाद असीमित लिख दिया यानि कि उसने कहा कि इसके अन्त को कहा ही नहीं जा सकता है। अन्त में उसने चार पंक्तियाँ लिखी हैं। उसमें उसने लिखा है कि मैं तो बहुत असमंजस में पड़ गया हुआ हूँ और मुझे कुछ भी सूझ नहीं रहा है। यदि किसी रूहानी व्यक्ति ने इस सम्बन्ध में लिखा हो तो वह आकर मेरे साथ बात करे।

मैं यू.एस.ए. में था। मेरे मन में आया कि मैं इसे मिल कर जाऊँ लेकिन मिल न सका। वह लन्दन में था और उसे अधरंग की बीमारी हो चुकी थी। अब दो वर्ष हो गए हैं, जिस समय कि वह हवाई दुर्घटना में मारा गया। अतः महाराज जी ने कहा है कि उसके बारे में कुछ कहा ही नहीं जा सकता है। इसलिए इस बात को सोचना ही फिजूल की बात है।

अतः महाराज जी कहते हैं कि तुम एक बार नहीं बल्कि बहुत बार मनुष्य बने हो और इसकी गिनती कर पाना भी असम्भव है कि तुम कितनी बार मनुष्य बने हो और न ही यह बता पाना ही सम्भव है कि यह धरती कब से बनी है। कई लोग संसार की आयु की गणना करते हैं, हो सकता है कि ऐसा हो जाए या कोई गणना कम्प्यूटर की पकड़ में आ जाए लेकिन अभी तो यह असम्भव ही है। हिन्दू महापुरुषों व ऋषियों-मुनियों ने इस दिशा में बहुत खोज की है। उन्होंने अनुभव के द्वारा बहुत खोज की है, ध्यान लगा लगाकर उन्होंने समय का विभाजन किया है। उन्होंने इसे चौदह कल्पों में बाँटा है। चार अरब बत्तीस करोड़ वर्षों का एक कल्प हुआ करता है। वे कहते हैं कि चौदह कल्पों के बाद दोबारा प्रलय आ जाया करती है, फिर उसके बाद उन्होंने महाप्रलय की भी बात कही है। उन्होंने 'माया' की उम्र की भी गणना करने की कोशिश की है। यदि कोई देखे तो उन्होंने बहुत लम्बे-चौड़े हिसाब-किताब किए हैं। शिव जी की उम्र की भी उन्होंने गणना की है -

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु ॥

इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु ॥ अंग - 7

उन्होंने शिव जी की आयु को 16 करोड़ खरब साल बताया है। अतः इस विस्तार का कोई अन्त नहीं है और न ही इसका अन्त कोई पा ही सकता है। हम लोग इसमें जीव बनकर आ गए हैं, लेकिन हमारे ऊपर आस-पास का, वातावरण का इतना प्रभाव पड़ गया है कि हमारे ख्यालों का निम्न स्तर हो गया है। मानवीय स्तर से हम लोग नीचे आ गए हैं। अब हमें कुछ भी पता नहीं चल पा रहा है कि हम क्या करें? महाराज जी हमें कहते हैं कि ऐ जीव! तुम तो माया के चक्रव्यूह में फँस गए हो।

अतः इस प्रकार से श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर हमें जो पहला उपदेश है, वह कर्म सिद्धान्त के रूप में दिया जाता है। अब अशुभ कर्म करते-करते इस मन को मैल लग जाती है, फलस्वरूप अन्तःकरण के अन्दर अत्यधिक मैल चली जाती है तो इस मैल का प्रभाव यह होता है कि साथ में रहता हुआ वाहिगुरू दिखाई नहीं पड़ता है। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी हमें बार-बार समझाते हैं कि तुम्हारे साथ ही वाहिगुरू जी रह रहे हैं लेकिन हमें तो इस बात पर विश्वास ही नहीं आता है। इसका कारण गुरू जी बताते हैं कि ऐ जीव! तुम्हारे अन्तःकरण में मैल इतनी अधिक लगी हुई है जो कि परमात्मा की धारा को अन्दर ही नहीं जाने दे रही है। जिस प्रकार से इंजन का कारब्यूरेटर होता है यदि उसके अन्दर कार्बन जम जाए तो वह करंट को आगे जाने ही नहीं देती है, बैटरी की तरफ से तो करंट आ रही है लेकिन वह इंजन में नहीं आ रही है। अब मैकेनिक पहले कार्बन को हटाता है, तब कहीं जाकर वहाँ से करंट आगे जा पाता है। बिल्कुल यही स्थिति हमारी है। अतः सबसे पहला जो उपदेश है, साधारण व्यक्ति के लिए, वह यह है कि हमें इस मैल को सबसे पहले दूर करना चाहिए। गुरू जी हमें बार बार समझाते हुए उपदेश करते हैं कि -

कपड़ु रूपु सुहावणा छडि दुनीआ अंदरि जावणा ॥
मंदा चंगा आपणा आपे ही कीता पावणा ॥
हुकम कीए मनि भावदे राहि भीड़ै अगै जावणा ॥
नंगा दोजकि चालिआ ता दिसै खरा डरावणा ॥
करि अऊगण पछोतावणा ॥ अंग - 471

गुरू जी हमें बार-बार समझाते हैं और उसके बाद यह प्रेरणा करते हैं कि तुम लोग शुभ कर्म करो, सेवा करो, सत्य का जीवन जियो, सत्संग करो। इसके द्वारा तुम्हें शुभ फल प्राप्त होगा -

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ ॥
ता दरगह बैसणु पाईऐ ॥
कहु नानक बाह लुडाईऐ ॥ अंग - 26

अब सेवा करने से होगा यह कि जो हमारे अन्तःकरण में मैल लगी हुई है, वह धीरे-धीरे दूर होना शुरू हो जाएगी। जब हम शुभ कर्म करेंगे, निष्काम कर्म करेंगे, गुरवाणी पढ़ेंगे, नाम सिमरन की तरफ अपने मन को लगाएँगे तो मन स्वाभाविक रूप से निर्मल होना शुरू हो जाएगा क्योंकि गुरू जी ने मन को निर्मल करने की युक्ति कथन की है। यथा -

भरीऐ मति पापा कै संगि ॥
ओहु धोपै नावै कै रंगि ॥ अंग - 4

पूरी तरह से मैल दूर होकर हमारी मति निर्मल तो तभी हो पाती है जबकि नाम का प्यार हमारे हृदय में बस जाए। जब तक नाम हमारे हृदय में बसता नहीं है, मैल हमारे हृदय में चढ़ी हुई है, अन्ध व गुबार हमारे दिमाग में छाया हुआ है, तब तक हमें कुछ भी पता नहीं चल पाता है और पास में रहते हुए वाहिगुरू का भी हमें आभास नहीं हो पाता है। वाहिगुरू तो हमारे इतना अधिक नजदीक रहता है कि जिसके बारे में गुरू जी का फुरमान है कि वह तो तुम्हारे आगे-पीछे ही रहता है -

जह जह पेखऊ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई ॥
रवि रहिआ सरबत्र मै मन सदा धिआई ॥ 1 ॥
ईत ऊत नही बीछुड़ै सो संगी गनीऐ ॥
बिनसि जाइ जो निमख महि सो अलप सुखु भनीऐ॥
अंग - 677

अब श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी इतनी सच्चाई की बात बतला रहे हैं लेकिन फिर भी हम समझते क्यों नहीं हैं? इसका मुख्य कारण यह है कि हमारी बुद्धि ही अत्यन्त निम्न स्तर की हो गई है। पुस्तकें पढ़ने से, पुस्तकें लिखने से कोई फर्क नहीं पड़ता है, जब तक कि अपना आन्तरिक अनुभव न खुल जाए -

पड़िऐ नाही भेदु बुझिऐ पावणा ॥ अंग - 148

बूझने की सारी बात है। कई बार मैंने इसे स्पष्ट करते हुए विनती की है कि एक बार कुछ बुद्धिमान कृषि विज्ञान के माहिर लोग एकत्र थे। वे सारे ही एक आम के पेड़ के पास में खड़े होकर उसकी विशेषताओं को गिना रहे थे कि यह फल इस विधि से बढ़ रहा है, इतनी कैलोरी इसके अन्दर है। इसके अन्दर इतनी शुगर है, इतना एसिड है, इसके इतने

पौष्टिक लाभ हैं। इस प्रकार का इसका स्वाद है, यह अमुक प्रकार के आम से पृथक है। यह लंगड़ा व बनारसी से अलग प्रकार का स्वाद रखता है। अब वे सारे इस प्रकार की बातें तो करते जा रहे हैं लेकिन किसी को भी इसका अनुभव नहीं है। अब अनुभव किसे होगा? अनुभव तो उसी को होगा जो आम को तोड़कर उसे चूस लेगा। उसे सारी चीजों का पता स्वतः ही लग जाएगा। अब उसे इस बात को जानने की कोई जरूरत नहीं है कि इसके अन्दर क्या क्या है क्योंकि उसने तो इसके स्वाद को चख ही लिया है। बस केवल बुद्धिमानों और अनुभवी व्यक्तियों में यह अन्तर है। एक विद्या वह है जो हमने अपने आन्तरिक अनुभव के द्वारा प्राप्त की है और दूसरी विद्या वह है जो हमने पुस्तकों के द्वारा प्राप्त की है। वह विद्या भी निष्फल नहीं जाया करती है लेकिन वह व्यक्ति का मार्ग दर्शन करती है कि व्यक्ति उसके मार्ग दर्शन में चले। अतः श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर जो पहला उपदेश है, वह कर्म का उपदेश है कि तुम शुभ कर्म करो, नेकी करो, ठगी न करो, धोखा न करो। यदि तुम किसी के साथ ठगी या धोखा करोगे तो उसकी बहुत बड़ी सजा मिलेगी। फलस्वरूप तुम दरगाह में जाकर बहुत दुखी होओगे। गुरू जी इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

लै फाहे राती तुरहि प्रभु जाणै प्राणी ॥
तकहि नारि पराईआ लुकि अंदरि ठाणी ॥
संन्ही देन्हि विखंम थाइ मिठा मदु माणी ॥
करमी आपो आपणी आपे पछुताणी ॥
अजराईलु फरेसता तिल पीड़े घाणी ॥ अंग - 315

इस मलिन अवस्था में चलने वाले व्यक्ति के लिए गुरू जी ने जो उपदेश दिए हैं, इन्हें भयानक उपदेश कहते हैं जो कि अपनी जगह पर पूर्णतः दुरुस्त हैं और ऐसा भी नहीं है कि ये सत्य नहीं है और केवल डराने के लिए ही है। इसमें डराने वाली कोई बात नहीं है। गुरू जी कथन करते हैं -

संतन की सुणि साची साखी ॥
सो बोलहि जो पेखहि आखी॥ अंग - 894

वे जो बात आँखों के द्वारा देखते हैं, उसी प्रकार के वचन करते हैं। इसी प्रकार से जो दूसरा उपदेश होता है, वह इस तरफ रुचि बढ़ाने वाला होता है। जब व्यक्ति शुभ कर्म करता है, सेवा करता है, वाणी पढ़ता है, गुरू धारण करता है, अच्छा जीवन व्यतीत करता है, गुरू के हुक्मों का पालन अपने जीवन में करता है, उस समय जो उपदेश होता है, वह रुचि बढ़ाने वाला होता है क्योंकि अब वह बुरे कार्य तो करता ही नहीं है, इसीलिए अब उसे नाम सिमरन आदि में रुचि बढ़ाने वाला उपदेश कारगार सिद्ध होता है। नाम सिमरन के लाभ के बारे में उसे उपदेश दिया जाता है, जैसे कि सुखमनी साहिब की पहली अष्टपदी के अन्दर बहुत ही विस्तारपूर्वक इस बात का वर्णन किया गया है -

धंनि धंनि कहै सभु कोइ ॥
मुख ऊजल हरि दरगह सोइ ॥
इहु वापारु विरला वापारै ॥
नानक ता कै सद बलिहारै ॥ अंग - 283

इसमें उन्नति करने के लिए उपासना काण्ड हुआ करता है। महापुरुषों को इस बात का पता होता है, इसलिए वे जिज्ञासु की अवस्था के अनुसार ही उसे उपदेश करते हैं, यानि कि वे उसी के अनुसार नाम अभ्यास बतलाते हैं तथा समझाते हैं कि इस प्रकार से तुम उपासना काण्ड में से निकल सकते हो। तीसरा होता है - यथार्थ। पहली दो अवस्थाओं में व्यक्ति वचनों की कमाई नहीं कर पाता है, हाँ वह बौद्धिक स्तर पर तो समझ लेता है लेकिन वह उन्हें अपने जीवन में उतार नहीं पाता है यानि कि जीवन में उनका प्रयोग नहीं कर पाता है।

अतः तीसरे प्रकार के वे उपदेश होते हैं जो कि उत्तम प्रकार के जिज्ञासुओं के लिए होते हैं तथा चौथे प्रकार के जो उपदेश होते हैं, वे केवल उनके लिए होते हैं, जिनका केवल एक कदम ही शेष रह गया होता है। वह कदम गुरू की कृपा के बिना आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है -

नानक नदरी नदरि निहाल ॥ अंग - 8

वहाँ पर जाकर जिज्ञासु रुक जाता है क्योंकि वहाँ पर जाकर बार-बार दरवाजा खटखटाना पड़ता है और जब परमात्मा दयावान होता है तो वह दरवाजा खुल जाता है। इस प्रकार यह सारी पद्धति वैज्ञानिक है।

अतः इसमें गुरू पाँचवें महाराज जी सेवा करवा रहे हैं क्योंकि श्री गुरू नानक देव जी के समय से ही हुक्म था कि यह कल्युग का तीर्थ होगा। जहाँ पर आजकल अमृतसर शहर बसा हुआ है, उस समय तुंग गाँव के पास बहुत ही घना जंगल हुआ करता था। उस जंगल में श्री गुरू नानक देव जी ठहरे हुए थे और वहाँ पर वचन हुए थे कि यह स्थान बहुत अच्छे प्रकार से आबाद होगा और यह कल्युग का तीर्थ होगा। अन्य सभी तीर्थों में अशुद्धियाँ आ जाएंगी लेकिन यहाँ पर नाम-वाणी का प्रवाह चलते रहने के कारण पवित्रता रहेगी दूसरे पातशाह जी ने भी तीसरे पातशाह जी को कहा और तीसरे पातशाह जी ने गुरू रामदास जी को वह जगह दिखलाई। वहाँ

पर बैठ कर आपने सरोवर हेतु काफी खुदाई भी करवाई लेकिन समय के अन्तराल के साथ फिर वहाँ पर निशान मिट गए और दोबारा झोंपड़ी ही रह गई तथा चहुँओर झाड़ियाँ उग आईं। गुरू चौथे महाराज जी ने पाँचवें महाराज जी को हुक्म दिया कि यह तीर्थ प्रकट करना है। अतः आप उस समय वहाँ पर सरोवर की खुदाई करवा रहे हैं तथा संगत को उपदेश कर रहे हैं कि प्रेमीजनो! नाम सिमरन के साथ-साथ सेवा भी करो क्योंकि सेवा करने से -

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ॥ ता दरगह बैसणु पाईऐ॥

यहाँ भी सम्मान मिलता है तथा दरगाह में भी सम्मान मिलता है। यथा -

धारना - नाम जपीए ताँ दूर हुंदे दुखड़े,
सेवा करके माण पाईदै।

सिमरन तथा सेवा दोनों आवश्यक हैं जैसे कि हवाई जहाज, एक पंख के द्वारा उड़ नहीं सकता है या यूँ समझ लो कि किसान ने धान की फसल की रोपाई की हुई है और उधर सूखा पड़ा हुआ है तथा जमीन में दरारें फट चुकी हैं। अब यदि एक ट्यूबवैल से सिंचाई शुरू की जाती है तो वह सारा पानी दरारों में ही खत्म हो जाता है। जिन्हें धान बोने का अनुभव है, वे इस बात को अच्छी तरह से जानते हैं कि यदि दो ट्यूबवैलों को एक साथ जोड़कर सिंचाई की जाए तो वह पानी धक्का मारते हुए आगे चला जाता है। फलस्वरूप खेत भर जाता है, अन्यथा दरारों वाले खेत को भर पाना टेढ़ी खीर ही साबित होती है। इसी प्रकार से कल्युग के व्यक्ति की उम्र इतनी थोड़ी है कि पता ही नहीं चलता है कि काल की गुलेल कब आकर लग जाए और आदमी संसार से चला जाए। गुरू जी कहते हैं -

नह बारिक नह जोबनै नह बिरधी कछु बंधु ॥
ओह बेरा नह बूझीऐ जऊ आइ परै जम फंधु ॥
अंग - 254

कब यमदूत आकर पकड़ ले इस बात का कोई पता नहीं चलता है। अखबार को उठाकर देख लो, रोज ही खबरें आती हैं कि इतने मर गए, इतनी दुर्घटनाएँ हो गईं, इतना यह हो गया, इतना वह हो गया। साधु संगत जी! वास्तविक बात तो यह है कि यह रहने की जगह ही नहीं है बल्कि यह तो चलो चली का मेला ही है। इस बात को निश्चयात्मक ढंग से मान ही लेना चाहिए कि संसार में हमने हमेशा के लिए रहना ही नहीं है -

जा रहणा नाही ऐतु जगि ता काइतु गारबि हंढीऐ ॥
अंग - 473

फिर उल्टी-पुल्टी बातें करने का क्या लाभ है? जब यहाँ पर रहना ही नहीं है, यहाँ से एक दिन चले ही जाना है, फिर यहाँ पर इतना अधिक लिप्त क्यों होना है? यहाँ पर तो हमेशा के लिए कोई भी नहीं रहा है। गुरू जी का ऐसा फ़ुरमान है -

धारना - इथे रिहा ना जगत ऊते कोई,
वारी आई तुर जावणा।

एक शिव भए एक गए, एक फेर भए,
राम चंद्र किशन के अवतार भी अनेक हैं॥
ब्रहमा अरू बिशन केते बेद औ पुरान केते,
सिंम्रिति समूहन कै हुइ हुइ बिताए हैं॥
मोनदी मदार केते असुनी कुमार केते
अंसा अवतार केते काल बस भए हैं॥
पीर औ पिकाँबर केते गने न परत एते
भूम ही ते होइकै फेरे भूम ही मिलए हैं॥
त्वप्रसादि कबित (अकाल ऊसतति)

इस प्रकार से समय का कुछ भी पता नहीं है -

कालु अहेरी फिरै बधिक जिऊ
कहहु कवन बिधि कीजै ॥ अंग - 692

कहते हैं कि जो शिकारी रूपी काल है, वह तो अपनी गुलेल लेकर प्रत्येक समय घूम ही रहा है, न जाने वह कब अपनी गुलेल चला दे।

अतः जब पता ही नहीं है कि संसार से कब चले जाना है तो फिर इस संसार से इतना मोह रखने का क्या लाभ है? कोई गारंटी नहीं है कि हमने बुढ़ापे तक पहुँचना ही है। गुरू जी कहते हैं कि इस बात का कुछ भी पता नहीं है -

नह बारिक नह जोबनै नह बिरधी कछु बंधु ॥
ओह बेरा नह बूझीऐ जऊ आइ परै जम फंधु ॥
अंग - 254

अतः हमें भजन बन्दगी में जुट जाना चाहिए ताकि हमारा कल्याण हो जाए। गुरू जी कहते हैं कि इसके लिए तुम दो काम शुरू कर लो, एक तरफ तुम सेवा करो, दूसरी तरफ सिमरन करो और जल्दी से जल्दी करो क्योंकि भविष्य के बारे में तो हमें कुछ भी पता नहीं है -

हरि जपदिआ खिनु ढिल न कीजई मेरी जिंदुड़ीए
मतु कि जापै साहु आवै कि न आवै राम ॥
अंग - 540

'चलता'

बिनु सवदै अंतरि आनेरा

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

सतिनामु श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज।

डंडऊति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ॥
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥
अंग - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तऊ सरनाइ॥
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥
अंग - 289

धारना - प्रभ सभ किछु तेरा जी,
मैं किछु नाही-मैं किछु नाही।

मै नाही प्रभ सभु किछु तेरा ॥
ईघै निरगुन ऊघै सरगुन
केल करत बिचि सुआमी मेरा ॥ 1 ॥ रहाऊ ॥
नगर महि आपि बाहरि फुनि आपन
प्रभ मेरे को सगल बसेरा ॥
आपे ही राजनु आपे ही राइआ
कह कह ठाकुरू कह कह चेरा ॥ 1 ॥
का कऊ दुराऊ का सिऊ बलबंचा
जह जह पेखऊ तह तह नेरा ॥
साध मूरति गुरू भेटिओ नानक
मिलि सागर बूंद नही अन हेरा ॥ अंग - 827

कतहूं सुचेत हुइकै चेतना को चार कीओ,
कतहूं अचिंत हुइकै सोवत अचेत हो॥
कतहूं भिखारी हुइकै माँगत फिरत भीख,
कहूं महाँ दान हुइकै माँगिओ धन देत हो॥
कहूं महाराजन को दीजत अनंत दान,
कहूं महाराजन ते छीन छित लेत हो॥
कहूं बेद रीत, कहूं ता सिऊ बिप्रीत,
कहूं त्रिगुन अतीत कहूं सुरगुन समेत हो॥
त्वप्रसादि कबित

साधु संगत जी! अपनी चित्त वृत्तियों को एकाग्र करो, नेत्रों के द्वारा गुरू स्वरूप के दर्शन करो, कानों के द्वारा गुरवाणी को श्रवण करो, जिह्वा के द्वारा गुरवाणी का गायन करो, बुद्धि के साथ गुरवाणी की विचार कके उसे अपने हृदय में धारण करो, फिर इसका फल कितना है -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम ॥
अंग - 546

फिर उसे कल्युग के अन्दर करोड़ों यज्ञों का फल प्राप्त होता है, इसके अतिरिक्त अन्य प्रकार के फलों की तो गुरू जी कोई गणना ही नहीं करते हैं जैसे कि तीर्थों पर स्नान करने या बड़े-बड़े, कठिन-कठिन व्रतों को धारण करना। भीष्म पितामह ने एक व्रत धारण किया था कि मैं सारी जिन्दगी बह्मचारी रहूँगा। उन्हें ब्रह्मचारी गिना गया है, जती गिना गया है। भारतवर्ष के अन्दर छः ब्रह्मचारियों का उल्लेख मिलता है, वह उनमें से एक था। बहुत ही कड़ा व्रत है। इसी प्रकार से अड़सठ तीर्थों के स्नान करने, बार-बार उन पर स्नान करने आदि सब बहुत कठिन ब्रत हैं। इसी तरह से दान करने। वस्त्रों का दान करना, भूमि का दान करना, अपने समय का दान करना, अनेकों किस्मों के दान हैं। कोई दवाइयों का दान कर रहा है, कोई पढ़ाई लिखाई का दान कर रहा है। यदि उसके मन में अहंभाव आ जाए कि मैंने दान किया है तो वह सारा कार्य निष्फल हो जाता है।

गुरू महाराज जी की बात को समझना चाहिए गुरू जी ने गुरवाणी को यूँ ही नहीं लिखा हुआ है बल्कि यह सब विशुद्ध सत्य है -

जैसी मै आवै खसम की बाणी
तैसड़ा करी गिआनु वे लालो ॥ अंग - 722

यह इस प्रकार से नहीं है कि यह गुरू नानक साहिब की वाणी है, यह गुरू अंगद साहिब की वाणी है। कई प्रेमीपुरुष इस प्रकार से भी कह देते हैं लेकिन जिनके ज्ञान चक्षु खुले हैं, वे तो कहते हैं कि यह तो अकालपुरुष की वाणी है, चाहे पहले शरीर के द्वारा आ गई और चाहे दूसरे शरीर के द्वारा आ गई है, वास्तव में तो ज्योति एक ही है। वह ज्योति अब भी है और भविष्य में भी होगी। जब संसार शुरू में बना होगा, उस समय भी वह ज्योति थी और जब यह संसार समाप्त हो जाएगा, उस समय भी वह ज्योति

विद्यमान रहेगी।

अकालपुरुष का अपना ही करिश्मा यह गुरू ज्योति हुआ करती है। यह गुरवाणी धुर दरगाह की है। जब हम इसकी विचार करके इसे अपने हृदय में धारण करते हैं तो उसका करोड़ों यज्ञों का फल प्राप्त होता है। गुरू जी का फ़ुरमान है -

तीरथ बरत अरू दान करि मन मै धरै गुमानु ॥
नानक निहफलु जात तिह जिऊ कुंचर इसनानु ॥
अंग - 1428

हउमै के दो अर्थ हैं। जो बात हम लोग करते हैं, यह कुछ और है लेकिन जो असली अर्थ है, वह कुछ और है, वह गुमान आ गया कि मैं करता हूँ। मैंने इतने तीर्थ किए, मैंने इतना कठिन व्रत धारण किया। मैंने यह व्रत धारण किया है कि मैंने सारी जिन्दगी जूता ही नहीं पहनना है। गुरू महाराज जी कहते हैं यह तुमने कौन सी बात कर ली? बन्दरों को मोजे कौन पहनाता है? बैलों को जूते या मोजे कौन पहनाता है? भेड़-बकरियों को जूते या मोजे कौन पहनाता है? जंगलों के अन्दर जितने-जितने भी जानवर घूमते हैं, किसने जूते पहने हुए हैं? यदि तुम भी उनके बीच ही मिल गए तो फिर क्या हो गया? क्या फिर यह कोई विशेष बात हो गई? फिर ये तो बन्दरों के तुल्य ही हैं जो नंगे पैर घूमते रहते हैं। अत: इस प्रकार से महाराज जी ने बहुत से व्रत लिखे हैं, बहुत से कठिन साधन कर लिए -

खूक मलहारी गज गदाहा बिभूत धारी
गिदूआ मसान बास करिएई करत है। त्वप्रसादि कबित्

गुरू महाराज जी ने अकाल उसतति के अन्दर 20 कबित्त लिखे हैं, जिनमें व्यक्ति के बहुत सारे निरर्थक कार्यों के बारे में लिखा हुए हैं। एक व्यक्ति काँटों की सेज पर लेट गया और दुख पा रहा है। महाराज जी कहते हैं कि इसमें क्या हो गया? तुमसे अधिक तो दुख वह सहन कर रहा है, जो घायल हो गया है -

ताप के सहे ते जो पै पाईऐ अताप नाथ
तापना अनेक तन घाइल सहत है।

यदि कोई कहे कि मैं तो जप ही करता रहता हूँ और दिन रात टिकता ही नहीं हूँ -

जाप के कऐ ते जो पै पायत अजाप देव
पूदना सदीव तुही तुही ऊचरत है।

यहाँ पर एक चिड़िया होती है जो कि निरन्तर तूँ ही तूँ ही करती रहती है। गुरू जी कहते हैं कि जब तक तुम्हारे अन्दर ज्ञान ही नहीं आया तो फिर उसका क्या लाभ है?

अंगना अधीन काम क्रोध मै प्रबीन
एक गिआन के बिहीन छीन कैसे कै तरत है।

यदि तुम्हारा जीवन ही सच्चा व सुच्चा नहीं बना तो फिर तुम्हारा उद्धार कैसे को पाएगा? जब तक तुम्हारे सामने कोई निशाना ही नहीं है, तब तक तुम्हारा उद्धार कैसे हो पाएगा?

आप एक बहुत ही सुन्दर उदाहरण देते हैं। इश्क दो प्रकार का होता है, एक इश्क-ए-मजाजी होाता है और दूसरा इश्क-ए-हकीकी होता है। दोनों का आधार प्यार ही होता है। एक प्यार जो होता है वह सीमाओं के अन्दर होता है, जबकि एक प्यार जो होता है, वह सीमा रहित होता है, उसे इश्क-ए-हकीकी कहते हैं। इश्क-ए-मजाजी वह होता है, जिसमें किसी के शरीर से प्यार किया जाता है, उसकी पराकाष्ठा यह होती है कि उसके अन्दर ही लीन हो जाना, गुम हो जाना और स्वयं को कुछ भी न समझना।

यहाँ पर मैं थोड़ा सा फर्क बता देना चाहता हूँ। कई प्रेमीजन यह कहते हैं कि बैसाखी के अवसर पर गुरू दसवें महाराज जी ने श्री साहिब को नंगी करके और बड़ा ही भयानक रूप धारण करके और उसे हवा में लहरा कर तथा ऊँची आवाज में कहा कि मुझे एक शीश की जरूरत है क्योंकि मैंने इस भगउती (कृपाण रूपी देवी) को प्रसन्न करना है। सारे ही इतिहास मैंने देखे हैं, जितने भी लिखे हुए हैं, एक इतिहास को छोड़कर। उन इतिहासों में लिखा है कि यह सुनकर चारों तरफ सन्नाटा छा गया। अब जो इतिहासकार सिक्ख की मनोवैज्ञानिकता को जानते ही नहीं हैं, वे सब फिर इसी प्रकार से लिखते हैं। उन्हें पता ही नहीं है कि सिक्ख क्या होता है? सिक्ख की अवस्था क्या होती है? उन्हें यह सब पता न होने के कारण वे बुद्धिमण्डल के दायरे में अन्धेरे में अनुमान लगाते हैं। वे कहते हैं कि चारों तरफ सन्नाटा छा गया। दूसरी बार उन्होंने पुन: कहा कि है कोई ऐसा सिक्ख जो अपना शीश भेंट करे? इतिहासकार लिखता है कि अब कोई भी व्यक्ति ऊँची गर्दन नहीं कर रहा है, कोई भी व्यक्ति गुरू जी के नेत्रों से नेत्र नहीं मिला पा रहा है, सबने अपनी गर्दनें नीचे झुका लीं। तीसरी बार गुरू जी ने फिर आवाज दी जिससे ऐसा लगता था कि अब वे बहुत निराशा में बोल रहे हैं कि क्या संगत में कोई भी ऐसा सिक्ख नहीं है जो कि अपना शीश भेंट कर सके? कहते हैं कि फिर भाई दया सिंह

जी उठे। ये सब इतिहासकारों की बातें हैं। अब एक इतिहास तो वह है जो कि बुद्धि के बल से लिखा जाता है, जबकि दूसरा इतिहास वह है जो कि गुरमति के प्रकाश में लिखा जाता है। जब हम गुरमति के प्रकाश में इस बात का विश्लेषण करते हैं तो सारी बात इससे विपरीत दिखाई पड़ती है। गुरमति के प्रकाश में विचार करने वाली बात यह है कि दो सौ साल की सिक्खी हो, सिक्ख गुरू पर कुर्बान होते हैं, वे गुरू के साथ प्यार के बारे में पढ़ते हों कि प्यार क्या होता है तो फिर इतनी अधिक कमजोरी? जब प्यार का जिक्र करते हैं तो फिर इस प्रकार से पढ़ते हैं -

जिऊ मछुली बिनु पाणीऐ किऊ जीवणु पावै ॥
बूंद विहूणा चात्रिको किऊ करि त्रिपतावै ॥
नाद कुरंकहि बेधिआ सनमुख ऊठि धावै ॥
भवरू लोभी कुसम बासु का मिलि आपु बंधावै ॥
तिऊ संत जना हरि प्रीति है देखि दरसु अघावै ॥
अंग - 708

ऐसा प्यार गुरू तथा सिक्ख का वर्णन किया गया है ये कोई काल्पनिक बातें नहीं हैं। इसमें एक वचन आया है कि 'नाद कुरंकहि बेधिआ सनमुख उठि धावै।।' जो हिरन है वह घंडाहेड़ा के शब्द पर बहुत मस्त होता है। अब शिकारी जो है, वह उस शब्द को बजा देता है, फलस्वरूप हिरन उसी दिशा में दौड़कर चला जाता है और मस्त होकर शिकारी के सामने ही लोटने लग पड़ता है। शिकारी जो है, वह बड़ी ही सरलता से उसे पकड़ लेता है। इस प्रकार की प्रीति सिक्ख और गुरू की हुआ करती है। सिक्ख तो बनता ही तभी है यदि अपना सब कुछ गुरू को भेंट कर दे और अपने पास कुछ भी न रखे। इसके अब दो तातर्प्य हैं। एक तो इसका नकारात्मक बिन्दु है, वह यह है कि दो सौ सालों के अन्दर क्या कोई सिक्ख बन ही नहीं सका था? सिक्ख अभी मृत्यु को जीत ही नहीं सका था? मरणोपरान्त के जीवन को अभी किसी ने जाना ही नहीं था? आप लोग इस बात पर विचार करके देखना कि पहली आवाज, दूसरी आवाज, तीसरी आवाज। सबके मुँह पीले पड़ गए, सभी डर गए। प्रतीत होता है कि इतिहास लिखने वालों को अध्यात्मवाद के बारे में कुछ भी पता नहीं है और उन्हें गुरू व सिक्ख के प्यार के बारे में तनिक सा भी ज्ञान नहीं है। सिक्ख तो अपने पास कुछ भी नहीं रखता है, वह तो स्वयं को गुरू की अमानत मानता है-

तनु मनु धनु सभु सऊपि गुर कऊ......॥अंग - 918

जिस प्रकार से मान लो मैंने अपनी यह कोठी किसी महापुरुष को दान कर दी तो फिर इसके ऊपर मेरा क्या अधिकार रह गया? वे जब कहेंगे तो हम इसे खाली कर देंगे। फिर इसके लिए सोच-विचार किस बात की करनी है? फिर तो मैं यही कहूँगा कि यह तो इनकी बहुत मेहरबानी है कि इन्होंने बहुत दिनों तक गुजारा करवा दिया और आज मालिक आ गए तथा उन्होंने अपनी वस्तु माँग ली।

जिस की बसतु तिसु आगै राखै ॥
प्रभ की आगिआ मानै माथै ॥ अंग - 268

अतः यदि एक हिरन, जो शब्द के साथ विंधा हुआ है, वह उस शब्द में मस्त होकर शिकारी के सामने चला जाता है और मारा जाता है तो फिर जो सिक्ख गुरू के प्यार में विंधा हुआ है, वह तो प्रसन्न होगा और स्वयं को भाग्यशाली समझेगा कि मुझे आवाज दी है। फिर ऐसी कमजोरी कैसे आ जाएगी? और फिर जिसकी देह हंगता एक बार टूट जाती है, तो फिर वह दोबारा देह को प्यार नहीं किया करता है। वह तो फिर इसी प्रकार से रहता है, जैसे कि कोई व्यक्ति किराए के मकान में रहता है। ये सारी बातें विचार करने वाली हैं। जब गुरू के साथ प्यार हो गया तो फिर वह गुरू का ही हो जाया करता है। अतः दोनों प्रकार के प्यार के बारे में मैंने बताया है एक इश्क-ए-मजाजी है और दूसरा इश्क-ए-हकीकी है। इश्क-ए-मजाजी शरीर के साथ प्यार होता है। इसके अतिरिक्त और भी बहुत सारे प्यार होते हैं, अपनी आजीविका से भी प्यार हो सकता है, पशुओं के साथ भी प्यार हो सकता है, लेकिन मनुष्य का मनुष्य के साथ प्यार मशहूर है। प्यार के अन्दर लीन हुई एक महिला चली जा रही है। बहुत सारे लोग नमाज पड़ रहे हैं। एक काफिले में से सरदार उतरा और नमाज पढ़ने लगा। ईरान की बात है यह। वह महिला अपने आप में मस्त थी और वहाँ से, जहाँ पर कि सारे नमाजी, नमाज अदा कर रहे थे, आगे से निकल गई। अब उन लोगों की ऐसी मर्यादा है कि यदि नमाज करते समय, उनके सामने से कोई औरत निकल जाए तो नमाज खण्डित हो जाती है। हम लोगों की अपेक्षा उनमें एक-दो विशेषताएँ ज्यादा हैं। हम लोग तो जपुजी साहिब या सुखमनी साहिब पढ़ते हुए कई बार बच्चों को गालियाँ भी निकाल देते हैं।

एक बार की बात है कि मैं एक प्रेमीपुरुष के घर चला

गया। उनके बच्चे से कोई गलती हो गई। उसने अपने गुटके को बन्द कर लिया और बच्चे को गालियाँ निकालने लग पड़ा। मैंने कहा, भद्रपुरुष! तुम तो गुरवाणी पढ़ रहे हो। वह बोला गुरवाणी अपनी जगह है, लेकिन यह कुछ और विभाग है। अतः हम लोग इन बातों का ख्याल नहीं रखते हैं, जबकि इस्लाम वाले जिस समय नमाज पढ़ने लग जाते हैं तो जब तक नमाज समाप्त नहीं हो जाती है, तब तक न तो वे बोलते ही हैं और न ही वे और कोई हिलजुल ही करते हैं, भले ही कोई व्यक्ति उनका सामान ही क्यों न उठा कर ले जाए।

अब उस समय तो किसी ने कोई बात नहीं की लेकिन उसके बाद उन्होंने काजी के पास मुकद्दमा दायर कर दिया। अब नमाज को कजा करने की सजा, मृत्युदण्ड हुआ करती है। जब पेशी हुई तो वह महिला कहने लगी, काजी साहिब! मुझे मरने का तो कोई भय नहीं है, लेकिन मेरा एक सवाल है, यदि उसका जवाब मिल जाए ताकि मेरी सन्तुष्टि हो जाए। काजी बोला, तुम्हारा सवाल क्या है? वह कहने लगी, मैं एक मनष्य को प्यार करती हूँ यानि कि मेरा इश्क मजाजी है और मुझे यह भी पता है कि यह इश्क दरगाह में जाकर मेरी कोई भी मदद नहीं कर सकता है। बस संसार के अन्दर जितने भी दिन मैंने रहना है, मुझे उसका नशा रहना ही है और मैं उससे अलग होकर रह ही नहीं सकती हूँ। मैं उसी के ख्याल में खोई हुई थी जिसके कारण से मुझे किसी भी अन्य चीज का ख्याल ही नहीं रहा कि मेरे आस पास कौन है? या क्या हो रहा है? न तो मैंने नमाजियों को देखा और न ही मुझे पता है कि ये सब किसी जगह पर नमाज पढ़ रहे थे? यह तो मेरे पक्ष की बात है। मैं जरूर इनके सामने से गुजर गई होऊँगी क्योंकि इतने लोग गलत नहीं बोल सकते हैं। अब मेरा सवाल यह है कि इन सबकी सुरति तो अल्लाहताला की तरफ गई हुई थी। यदि ये सचमुच ही अल्लाहताला के साथ प्यार करते थे, तो इन्हें कैसे पता चल गया कि मैं इनके सामने से गुजर रही हूँ? मेरा तो यह कहना है कि उस समय ये सारे नमाजी, नमाज पढ़ ही नहीं रहे थे, बल्कि ये सब तो केवल अक्षरों को ही गिन रहे थे, इसलिए मेरा यह निवेदन है कि मेरी इस दलील पर भी गौर फरमाया जाए। काजी बुद्धिमान था, वह कहने लगा कि इस औरत की बात तो पूर्णतः दुरुस्त है क्योंकि यदि नमाज दिल से ही नहीं पढ़ी जा रही थी, नमाजियों का मन साथ ही नहीं दे रहा था तो वह नमाजी किस बात का है? और फिर नमाज, खण्डित कैसे हो गई? क्योंकि बात तो सारी मन की उपस्थिति की ही है -

ममा मन सिऊ काजु है मन साधे सिधि होइ ॥
मन ही मन सिऊ कहै कबीरा
मन सा मिलिआ न कोइ॥ अंग - 342

अतः असली बात यह है कि जिस समय हम गुरवाणी पढ़ते हैं तो उस समय हमारी सुरति एकाग्र होनी चाहिए, हमारा आस पास का सारा माहौल हमें विस्मृत हो जाना चाहिए और हमारा केवल ध्येय ही हमारे सामने होना चाहिए। जब इस प्रकार से भजन बन्दगी करते हैं, यह कीर्तन करते हैं तो वह कीर्तन ही समाधि रूप होकर हमें फल प्रदान करता है -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम ॥
अंग - 546

जो गुरवाणी को सुनते और गाते हैं तो फिर उन्हें करोड़ों यज्ञों का फल प्राप्त होता है। इसलिए मैंने विनती की थी कि -

तीरथ बरत अरू दान करि मन मै धरै गुमानु ॥
नानक निहफलु जात तिह जिऊ कुंचर इसनानु ॥

गुरू महाराज जी को सिक्खों ने पूछा कि महाराज जी! क्या कल्युग में कोई ऐसा पुण्य कर्म है जिसका नाश न हो? गुरू जी बोले, एक कर्म है और वह है -

कलि महि एहो पुंनु गुण गोविंद गाहि ॥ अंग - 962

इस पुण्य का कभी नाश नहीं होता है और इसका फल कितना है -

कलजुग महि कीरतनु परधाना ॥
गुरमुखि जपीऐ लाइ धिआना ॥
आपि तरै सगले कुल तारे
हरि दरगह पति सिऊ जाइदा ॥ अंग - 1076

अब यह कितना बड़ा फल है? अतः आप सब अपने-अपने कारोबारों को विराम देते हुए गुरू दरबार में पहुँचे हो। पिछले दीवानों के दौरान मैंने एक निवेदन एक योगी के हवाले से किया था कि जिस समय दरबार साहिब की रचना हो रही थी तो उस समय अमृत सरोवर के पास में ही एक सरोवर था - सन्तोषसर। उसमे एक मठ था और उस मठ में से एक योगी निकला था। गुरू महाराज जी ने जब उसके शरीर पर कस्तूरी वगैरह मली और बादाम रोगन वगैरह की मालिश करवाई पैरों के तलवों में बादाम रोगन की मालिश करवाई, दसवें द्वार की जगह मालिश करवाई तो उस समय उसे होश

आ गई तथा जिन प्राणों को उसने रोका हुआ था, वे शरीर में चल पड़े क्योंकि प्राणायाम के माध्यम से व्यक्ति लाखों सालों तक जीवित रह सकता है। यह कोई कठिन बात नहीं है। मेंढक जो है यह श्वास को रोक लेता है। इसी प्रकार से भालू जो है, यह श्वास को रोक लेता है, जिस समय बर्फ पड़ने लगती है तो उस समय यह अपने श्वास को रोककर लेट जाता है और छः महीने बाद जब बर्फ ढल जाती है तो उस समय यह अपनी सुरति को उतारता है। अमेरिका के अन्दर मैंने देखा है, वहाँ पर वे दिखा रहे थे कि अब ये अपनी खुराक को एकत्र कर रहे हैं। इन्हें पता है कि अब बर्फ पड़नी शुरू हो जाएगी, इसलिए हम अपनी खुराक को दबा दें। इसलिए वे अपनी खुराक को ढूँढ़ ढूँढ़ कर बर्फ में दबा रहे थे। इसके बाद वे सुरक्षित जगहों को देखकर टहनियों वगैरह के नीचे श्वासों को खींच कर लेट गए। इसी प्रकार से वे तीन चार महीने लेटे रहे। उसके बाद जब बर्फ ढल गई तो उन्हें पता था कि हम लोगों ने अपनी खुराक को कहाँ पर दबाया था, अतः वे अपनी-अपनी खुराक को निकाल कर खाने लग पड़े। वह भी एक प्रकार की समाधि हुआ करती है। वह शून्यावस्था हुआ करती है। उसमें जान तो हुआ करती है लेकिन बलवला नहीं हुआ करता है, यह एक शारीरिक क्रिया है। अतः उस शारीरिक क्रिया के अनुसार वह योगी कहने लगा कि यह कौन सा युग है?

कुछ दिन पहले मैंने विनती की थी कि योगियों के लिए भाषा कोई समस्या नहीं होती है क्योंकि वे सर्वयोग विद्या के ज्ञाता होते हैं। उसके अन्दर किसी भी प्रकार की भाषा को, वे बिना पढ़ाई से पढ़ लेते हैं क्योंकि सारी विद्याएँ तो हमारे अन्दर ही पड़ी होती हैं। इसीलिए तो भाई गुरदास जी ने लिखा है कि गुरू नानक देव जी वहाँ तक गए, जहाँ तक कि आबादी थी। दूसरी तरफ हमारे हिसाब-किताब लगाने वाले लोग कहते हैं कि लगभग यहाँ तक कि बोली की समझ गुरू नानक जी को आ जानी थी क्योंकि वे फारसी पढ़े हुए थे, अरबी भी पढ़े हुए थे, इसलिए वे श्रीलंका तक और बर्मा (म्यांमार) तक और उधर तिब्बत व चीन तक का भ्रमण गुरू जी का मानते हैं। लेकिन भाई गुरदास जी, जो कि गुरू नानक देव जी से कुछ समय बाद ही हुए हैं उन्होंने कहा है कि बाबा नानक जी वहाँ तक गए जहाँ तक कि सृष्टि थी और वहाँ तक जाकर गुरू जी ने जन साधारण को समझाया। यह सब हम लोग नहीं लिख सके, इसलिए यह हम सबकी भूल है। अब महापुरुष तो अपनी बातें नहीं लिखा करते हैं बल्कि अन्य लोग ही लिखा करते हैं। इस प्रकार से गुरू जी ने सारी लोकाई को उपदेश दिया और उन्हें भाषा की कोई समस्या नहीं थी। अतः इस योगी को भी भाषा की कोई समस्या नहीं थी। हमारे मन में एक शंका आ जाती है कि उसे वहाँ पर बैठे हुए कितना समय हो गया था? उसने स्वयं बतलाया कि मैंने यहाँ पर ऊँची जगह देखकर मठ बनाया था। उस जगह पर इतना परिवर्तन आया कि धरती से भी सात आठ फुट गहरा उसका सिर था यानि कि मठ की ऊपरी चोटी थी। उस जगह पर गुरू महाराज जी ने कहा कि इसके चारों तरफ से मिट्टी को निकालो दस-दस फुट चारों तरफ से मिट्टी को खाली करो। अतः मठ वाली सारी जगह को खाली किया गया, नीचे जाकर दरवाजा आया जो कि ईंटों द्वारा बन्द किया हुआ था। उस दरवाजे को खोलकर उस योगी को बाहर निकाला गया। अब इतनी मिट्टी उसके ऊपर आ चुकी थी यदि हम मोटा हिसाब भी लगाएँ तो 15-16 फुट मिट्टी उस योगी के ऊपर आ चुकी थी, वह जगह ऊँची कितनी होगी क्योंकि पानी नीचे बहता था। उस समय भी 10-20 फुट ऊँची जगह देखकर बैठा होगा। 30 फुट के करीब ऊंची मिट्टी उसके ऊपर फैल गई थी। गुरू महाराज जी ने जिस समय उसे बाहर निकाला तो उस समय उसका पहला सवाल यही था कि यह कौन सा युग चल रहा है?

गुरू जी कहने लगे, कल्युग।

पहरा किसका है?

गुरू जी ने कहा, श्री गुरू नानक देव महाराज जी का पहरा है। गुरू नानक पातशाह जी, श्री गुरू अंगद देव जी के रूप में प्रकट हुए, गुरू अंगद देव जी, गुरू अमरदास जी के रूप में तथा गुरू अमरदास जी, गुरू रामदास जी के रूप में प्रकट हुए तथा श्री गुरू नानक देव जी का जो पाँचवां शरीर है, वह श्री गुरू अरजन देव जी के रूप में वर्तमान समय में संसार का उद्धार कर रहा है।

महाराज जी बैठे हुए हैं। उस समय उस योगी ने गुरू जी को नमस्कार की तथा कहा कि महाराज जी! आप धन्य हो। सवाल किया गया कि योगिराज! यहाँ पर तुम कब से बैठे हुए हो, उसने बताया कि यहाँ पर लव-कुश का युद्ध श्री रामचन्द्र जी के साथ हुआ था। जब सारी सेनाएँ मूर्च्छित हो गईं, उस समय उन्होंने स्वर्ग लोक से अमृत प्राप्त किया और सारी फौज को पुनर्जीवित कर दिया।

अब यदि हम इसे मिथिहास मान लें फिर सारा झगड़ा

ही समाप्त है फिर न तो हम आगे सोचें और न ही कोई बात करें लेकिन हम लोग इसे मिथिहास नहीं मानते हैं क्योंकि इसका सम्बन्ध हमारे बुजुर्गों के साथ है। दूसरे लोग कह दें तो कह दें।

श्री गुरू दसवें महाराज जी ने जिस समय विचित्र नाटक की रचना की तो उस समय आप श्री रामचन्द्र जी से शुरू करते हैं। लव तथा कुश का युद्ध लिखा कर लाहौर का कसूर बसाना गुरू महाराज जी ने लिखा है। उन्होंने साथ ही यह भी लिखा है कि मैं सारी चीजें अपनी स्मृति में से बोल रहा हूँ। इस बात पर हम हैरान होते हैं कि क्या यह भी कोई विद्या है? वह यह बात होती है कि जो समर्थ पुरुष हुआ करते हैं, उनके लिए समय की कोई बन्दिश नहीं हुआ करती है। यदि उनकी इच्छा हो ते वे दस हजार साल पुराने समय को भी आगे खींच कर देख सकते हैं जैसे कि हम लोग वीडियो फिल्म को पीछे करके देख लें। इसी प्रकार से समर्थ पुरुष समय को खींच कर देख लेते हैं और इसीलिए उन्हें त्रिकालदर्शी कहा जाता है। त्रिकालदर्शी या त्रिकालयज्ञ का अभिप्राय ही यह होता है कि वे भूत तथा भविष्य दोनों को देख सकते हैं। गुरू साहिब ने समय को पीछे कर लिया। जिस समय गुरू जी ने विचित्र नाटक की रचना की तो उस समय आप सामने देखते जाते हैं और लिखने वाले लिखते जाते हैं। फिर आखिर में उन्होंने लिखा है कि यदि मैं सारा वृत्तान्त ही लिखने लग जाऊँ तो यह ग्रन्थ बहुत बड़ा हो जाएगा। दूसरी बात आप यह कहते हैं कि जितनी-जितनी हमें समझ आई उसे हम लिखते चले गए। आपने यह नहीं लिखा है कि हमने अमुक ग्रन्थ पढ़ा है। जहाँ पर आपने किसी ग्रन्थ में से पढ़ा है तो वहाँ पर आपने इस बात का हवाला दिया है कि हम अमुक ग्रन्थ का अनुवाद कर रहे हैं और हम इसका अक्षर-अक्षर अनुवाद कर रहे हैं और हम इसमें कुछ भी घटा या बढ़ा नहीं रहे हैं। अतः जो त्रिकालदर्शी महापुरुष होते हैं वे बीत चुके समय को वर्तमान में बदल लेते हैं। ये सारी बातें वैज्ञानिक हैं, जिनके बारे में योगियों को पता है। अभी यूरोप वालों को तथा वैज्ञानिकों को इस बात की समझ नहीं आई है कि दिमाग के अन्दर कितनी दिशाएँ हैं। इन्हें यह तो पता है कि जो मैं यह बोल रहा हूँ, यह जागृत या चेतन दिमाग है और जो इसके अन्दर है, वह अर्द्धचेतन दिमाग है, वह **subconscious** है यानि कि आधा जागता हुआ और आधा सोया हुआ। जो इसकी तीसरी तह है वह अचेतन दिमाग है यानि कि **unconscious** है लेकिन अध्यात्मवाद के अन्दर इसके विपरीत है क्योंकि जो महापुरुष होते हैं, उनका यही सोया हुआ दिमाग जागृत होता है। गुरू महाराज जी ने इसे इस प्रकार से कहा है -

तिही गुणी संसारू भ्रमि सुता
सुतिआ रैणि विहाणी ॥ *अंग - 920*

रजो गुण, तमो गुण व सतो गुण के अन्दर सारा ही संसार सोया पड़ा है और सोए हुए ही इसकी सारी उम्र बीत जाती है। यह सपने की भांति ही निकल जाता है, फिर जागता कौन है? जो बीच वाला है वह आधा जागता है और आधा सोता है। जिसे हम यह कहते हैं कि बिल्कुल ही सोया पड़ा है तो महापुरुषों का जागृत मन होता है, वे उसमें परमात्मा को प्रत्यक्ष रूप से देख रहे होते हैं। इसमें उन्हें सत्य की समझ होती है और असत्य पर से उनकी दृष्टि हट जाती है।

अतः ये कुछ विनतियाँ हैं जो कि समझने वाली हैं। इस प्रकार से जब गुरू महाराज जी ने योगी को बाहर निकाला तो उस समय उसने पूछा कि इस समय कौन सा युग चल रहा है? इसके बाद जहाँ पर फौज के ऊपर अमृत का छिड़काव किया गया था और सारे मृत फौजी उठकर खड़े हो गए थे। उसके बारे में उस योगी ने बताया जितने फौजियों के सिर कट चुके थे या बाँहें कट गई थीं, वे सब उठकर खड़े हो गए थे, यानि कि उसने अमृत की तासीर के बारे में बतलाया।

अब हमारे यहाँ वे लोग डर जाते हैं कि क्या कोई व्यक्ति पुनर्जीवित हो सकता है? इसीलिए वे कह देते हैं कि गुरू जी ने बकरों को झटका दिया था। वे इस बात पर आते ही नहीं हैं। क्यों नहीं आते हैं? वे इसलिए नहीं आते हैं क्योंकि वे लोगों से डरते हैं। लेकिन यदि हम अपनी श्रृंखला को कायम रखें तो हमें कोई डर नहीं होना चाहिए क्योंकि इससे पहले भी ये बातें घटित होती रही हैं। सारी फौज को यदि वे जगा सकते हैं तो फिर गुरू साहिब क्या पाँच सिक्खों को नहीं जगा सकते हैं?

अतः उस समय उसने बताया कि मैंने अपने गुरू के पास विनती की कि मैंने कर्म व उपासना के पाठयक्रम पूरे कर लिए हैं क्योंकि गुरू के बिना ज्ञान नहीं हुआ करता है। ऐसे गुरू जी का सिद्धान्त ही है। ज्ञान के बिना कभी भी मुक्ति नहीं हुआ करती है। गुरू जी का ऐसा फुरमान है -

धारना - बिनाँ गुराँ तों मुकत ना होवे,
पुछो ब्रहमे नारदे नूं।

भाई रे गुर बिनु गिआनु न होइ ॥
पूछहु ब्रहमे नारदै बेद बिआसै कोइ ॥ *अंग - 59*

यह निर्णय श्री गुरू गरन्थ साहिब जी का है कि गुरू के बिना ज्ञान कभी भी नहीं हो सकता है। चाहे जितना मर्जी किताबों को पढ़ लो अथवा उन्हें कंठस्थ कर लो लेकिन ज्ञान नहीं हो पाएगा क्योंकि यह तो गुरू जी की कृपा है 'गुर प्रसादि' है। १ओंकार का सारा हाल लिखने के बाद आखिर में गुरू जी ने 'गुर प्रसादि' लिख दिया। यानि कि गुरू जी की कृपा के बिना हमारे आन्तरिक नेत्र कभी भी खुलते नहीं हैं। हम जाग नहीं पाते हैं। अतः हमें समर्थ गुरू की आवश्यकता है। इसीलिए गुरू के बारे में भाई गुरदास जी ने ऐसा फुरमान किया है -

सतिगुर पुरखु अगंमु है निरवैरू निराला।
जाणहु धरती धरम की सची धरमसाला।
जेहा बीजै सु लुणै फल करम समाला।
जिऊ करि निरमलु आरसी जगु वेखणि वाला।
जेहा मुहु करि भालीऐ तेहो वेखाला।
सेवक दरगह सुरखरू वेमुखु मुह काला।
भाई गुरदास जी, वार 34/1

इस प्रकार के गुरू की जब तक जिज्ञासु पर कृपा नहीं होती है, तब तक उसे ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो पाती है। जो अन्तिम पर्दा है, जिसे कि भ्रम कहते हैं, अज्ञानता कहते हैं, हउमै कहते हैं, उसके बारे में गुरू जी कहते हैं कि उसकी मैल केवल पढ़ाई कर लेने मात्र से दूर नहीं हो पाती है, चाहे कोई व्यक्ति वेदाध्ययन लाखों बार कर ले तो भी वह मैल दूर नहीं हो पाती है। उस गुरू की जितनी देर तक कृपा नहीं हो पाती है, तब तक वह हउमै की मैल दूर नहीं हो पाएगी। बुद्धि मण्डल का ज्ञान तो टीके पढ़कर हो जाता है, अर्थ सीखकर हो जाता है लेकिन आन्तरिक अन्धकार जो है, वह गुरू के बिना किसी भी तरह से नहीं हो पाया करता है -

धारना - बिनाँ गुराँ तों ना मिटणा अंधेरा,
चंद भावें सौ चड़ जाए।

जे सउ चंदा ऊगवहि सूरज चड़हि हजार ॥
एते चानण होदिआँ गुर बिनु घोर अंधार ॥ 2 ॥
मः 1 ॥ नानक गुरू न चेतनी मनि आपणै सुचेत ॥
छुटे तिल बूआड़ जिऊ सुंञे अंदरि खेत ॥
खेतै अंदरि छुटिआ कहु नानक सउ नाह ॥
फलीअहि फुलीअहि बपुड़े भी तन विचि सुआह ॥
अंग - 463

गुरू जी ने सारा कुछ इन छः पंक्तियों के अन्दर ही निर्णय करके समझा दिया कि प्रेमीजनो! जब तक गुरू की प्राप्ति न हो जाए तब तक आन्तरिक अन्धकार दूर नहीं हो पाएगा। गुरू की जो नदरि है, वह अन्य किसी भी प्रकार से प्राप्त नहीं हो पाती है। न पढ़ते रहने से, न तप करने से, न दान करने से, बस गुरू की नदरि तो तभी प्राप्त हो पाती है जबकि हम उसे प्रसन्न कर लेते हैं। अब गुरू को प्रसन्न कैसे किया जा सकता है? गुरू को प्रसन्न तभी किया जा सकता है, जबकि हम अपना सर्वस्व गुरू को अर्पित कर दें। यदि हम अपने पास कुछ रख लेते हैं तो फिर गुरू के साथ हमारी द्वैत बनी रहती है। गुरू जी ने तो बहुत ही स्पष्ट अक्षरों में कहा है कि -

पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस ॥
होहु सभना की रेणुका तऊ आऊ हमारै पासि ॥
अंग - 1102

यदि तुमने मेरे साथ प्यार की बात करनी है तो उसके लिए जो पहली शर्त है, वह यह है कि तुम मरना कबूल कर लो क्योंकि जीवन क्या है, यह जो हउमै का जीवन है, इसका भी बहुत बड़ा परिवार है और उस परिवार को हम फालतू रूप में अपने साथ लगाकर घूमते रहते हैं जो कि हमें तंग करता है, उसी के कारण हम जन्म लेते हैं, मरते हैं, कर्म भोगते हैं, कर्मों के भण्डार साथ लेकर घूमते हैं, दुख पाते हैं, सुख पाते हैं, गुरू जी कहते हैं कि इस सब को तुम गुरू चरणों में भेंट कर दो इसके साथ ही तुम अपने मन को भी भेंट कर दो, जब मन भी भेंट कर दिया तो फिर संकल्प-विकल्प कौन करेगा? यदि फिर संकल्प-विकल्प करता भी है तो फिर यह उसकी बहुत बड़ी भूल है क्योंकि दी हुई वस्तु को फिर वह स्वयं प्रयोग करता है। दान की हुई वस्तु का दोबारा स्वयं प्रयोग करना बहुत बड़ा दोष हुआ करता है। जब गुरू को दान ही कर दिया तो फिर उस पर अधिकार क्या रखना? गुरू जी कहते हैं कि मन को गुरू चरणों में भेंट करना अत्यावश्यक है, यानि कि मन को गुरू चरणों में दान करना सबसे जरूरी चीज है। गुरू जी इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

धारना - मन वेच दे गुराँ नूं आपणा,
कारज तेरे रास होणगे।

गुर कै ग्रिहि सेवकु जो रहै ॥
गुर की आगिआ मन महि सहै ॥
आपस कऊ करि कछु न जनावै ॥

हरि हरि नामु रिदै सद धिआवै ॥
मनु बेचै सतिगुर कै पासि ॥
तिसु सेवक के कारज रासि ॥
सेवा करत होइ निहकामी ॥
तिस कऊ होत परापति सुआमी ॥ अंग - 286

उपर्युक्त आठ पंक्तियों में गुरू जी ने चार वचन प्रमुख तौर पर कहे हैं। गुरू जी कहते हैं कि यदि तुम अपना उद्धार चाहते हो तो तुम इन वचनों का पालन कर लो, अन्यथा तुम्हारा पार हो पाना कठिन है। गुरू के पास आने के लिए सबसे पहले तो तुम्हें मरना कबूल करना ही पड़ेगा। जब तक तुम इस शर्त को स्वीकार ही नहीं करते हो, तब तक गुरू कुछ भी नहीं कर सकता है। दरअस्ल तुम गुरू के उपदेश को मानने के लिए तैयार ही नहीं हो। तुम अपनी 'मैं' को छोड़ना ही नहीं चाहते हो बल्कि अपने अस्तित्व को कायम रखना चाहते हो। जब तक तुम्हारा अपना अस्तित्व कायम है, तब तक गुरू कुछ भी नहीं कर सकता है। गुरू की खुशी प्राप्त नहीं हो सकती है, गुरू की कृपा प्राप्त नहीं हो सकती है क्योंकि वहाँ पर दो की तो जगह ही नहीं है बल्कि वहाँ पर तो एक की ही जगह है -

गुर की आगिआ मन महि सहै ॥ अंग - 1430

अब सारे 1430 अंग गुरू जी की आज्ञा ही तो है। यदि कोई सयाना पुरुष है तो इन आज्ञाओं की सूची बना सकता है कि गुरू जी यह चाहते हैं, फिर उसका अभ्यास करो और स्वयं को कुछ भी न माने कि मैं भी कुछ हूँ अथवा मैं भी दुनिया के अन्दर हूँ। यहाँ पर जो मन है, वह केवल मन को नहीं कहा है बल्कि मन के संगी-साथी और भी हैं, उन्हें भी कहा है। अन्तःकरण को भी मन के साथ जोड़ लो। चार चीजों को अन्तःकरण कहते हैं जो संकल्प विकल्प करने वाली शक्ति है, उसे मन कहते हैं जो निर्णय करने वाली शक्ति है, उसे बुद्धि कहते हैं, तीसरी इसके अन्दर चेतना होती है, जिसे कि चित्त (महसूस करने की शक्ति) कहते हैं, चौथी जो है वह है अहंभाव। मैं वरियाम सिंह या फलां सिंह हूँ, लोग मेरा आदर करते हैं, लोग मुझे अच्छा कहते हैं, ये सब डूब जाने वाली चीजें होती हैं। इन चीजों के कारण व्यक्ति कभी भी पार नहीं हो पाया करता है। इन चारों निरर्थक चीजों को बाँधकर गुरू चरणों में रख दो।

श्री गुरू नानक देव महाराज जी संसार का उद्धार करते-करते आज उस देश की तरफ गए हैं जिसे कि लोग स्वर्ग लोक की धरती कहते हैं। वह चटागांव से नीचे, बर्मा की सीमा के साथ-साथ जो बहुत सारे द्वीप हैं, वहाँ पर एक छोटा सा देश है, वहाँ पर गुरू जी आज पहुँचे हैं। वहाँ पर दो पहुँची हुई आत्माएँ निवास कर रही हैं लेकिन वे अन्तिम अवस्था पर रुकी हुई थीं यानि कि उन्हें अभी गुरू की कृपा प्राप्त नहीं हो पाई थी और गुरू की कृपा के बिना वे उस स्थिति को प्राप्त नहीं कर सकते थे। केवल गुरू ही उस माया की आखिरी बाधा को पार करवा सकता है, अन्यथा सारे ज्ञानी लोग मुक्त हो ही जाते। जिन्हें श्री गुरू ग्रन्थ साहिब के अर्थ आते वे सभी मुक्त हो जाते। वैसे तो ज्ञानी कहना भी कम मूल्यवान नहीं है क्योंकि ज्ञान की जो अवस्था है वह बहुत ही ऊँची अवस्था है। वे तो जीवन मुक्त पुरुष कहलाते हैं। जो सच्चे आचार में चलने वाला पुरुष है, उसे ज्ञानी कहते हैं। दूसरी तरफ जो बुद्धिमण्डल का ज्ञानी है, उसे तो गुरू जी ने गिना ही नहीं है, उसे तो गुरू जी मुर्दों में रखते हैं -

अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि ङिआनी धनवंत ॥
मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत ॥
अंग - 253

वह तो मुर्दा है, गुरवाणी में उसकी तो बात ही नहीं आती है, दूसरों की बात आती है, जो कि इससे ऊपर की बात चल रही है।

इस प्रकार से गुरू महाराज जी उस देश में पहुँच जाते हैं, जहाँ पर कि दो गुरसिक्ख प्यारे जिज्ञासुजन इस चीज के लिए लालायित हो रहे हैं कि सारा जन्म व्यतीत होता जा रहा है, कोई मार्ग नहीं मिल पा रहा है, बज्र कपाट नहीं खुल पा रहे हैं, अब क्या किया जाए? इन्हें पूर्ण गुरू के बिना कोई दूसरा तो खोल ही नहीं सकता है। अब पूर्ण गुरू की प्राप्ति कैसे हो पाएगी? गुरू जी भी कहते हैं, इन बज्र कपाटों को कोई दूसरा खोल ही नहीं सकता है -

घर महि घरू देखाइ देइ सो सतिगुरू पुरखु सुजाणु॥
अंग - 1291

ये जो पाँच तत्वों का घर है, इसके अन्दर वाहिगुरू निवास करता है -

काइआ नगरू नगर गड़ अंदरि ॥
साचा वासा पुरि गगनंदरि ॥
असथिरू थानु सदा निरमाइलु
आपे आपु ऊपाइदा ॥ 1 ॥
अंदरि कोट छजे हटनाले ॥ अंग - 1033

इस शरीर के किले में -

आपे लेवै वसतु समाले ॥

बजर कपाट जड़े जड़ि जाणै गुर सबदी खोलाइदा ॥
अंग – 1033

जब तक गुरू का शब्द नहीं मिलता है, तब तक इसे चाभी नहीं लग पाती है। अतः गुरू के बिना यह खुल ही नहीं पाता है –

भीतरि कोट गुफा घर जाई ॥
नऊ घर थापे हुकमि रजाई ॥
दसवै पुरखु अलेखु अपारी आपे अलखु लखाइदा ॥
अंग – 1033

ये नौ घर जो इसे भुलवा रहे थे –

नऊ घर देखि जु कामनि भूली बसतु अनूप न पाई॥
अंग – 339

उन्हें गुरू जी ने नियन्त्रित कर दिया है। उस शब्द ने इन्हें वश में कर लिया है, जिस प्रकार से कि सपेरे साँप वगैरह को मन्त्र पढ़कर अपने वश में कर लेते हैं। इसी प्रकार से जो किसी भी तरीके से वश में नहीं आ पाते हैं, उन्हें गुरू के शब्द के माध्यम से हमने अपने वश में कर लिया है। अब जो आँखें थीं, उनकी दृष्टि ही बदल गई है, कानों का सुनने का ढंग बदल गया है, जुबान का रस बदल गया है, इसी प्रकार से गन्ध व स्पर्श का नजरिया ही बदल गया है। यदि अनुभव न हो तो यह बात समझ में नहीं आ पाया करती है। अब ये बदलती कैसे है? यही नासिका जिसके द्वारा सुगन्ध लेने के लिए हम सेंट छिड़कते हैं, फूलों की फुलवाड़ी में जाते हैं, वहाँ पर हमें सुगन्ध आती है लेकिन जिस समय दिव्य नासिका खुल जाती है तो उस समय हमें अपने अन्दर से ही सुगन्ध आने लग पड़ती है फिर हमें किसी बाहरी सुगन्ध की जरूरत ही नहीं रहती है। फिर भजन बन्दगी के समय हमें अपने अन्दर से ही सुगन्ध आने लग पड़ती है। फिर तो हमें हैरानी होती है कि इतनी शानदार सुगन्ध कहाँ से आ रही है? उस सुगन्ध में व्यक्ति मस्त होता चला जाता है। बाहरी सुगन्ध हमें इतना मस्त नहीं कर पाती है। इसी प्रकार से जो जिह्वा का स्वाद है जिसे कि बदल-बदल कर थक जाता है कि आज सब्जी में यह डालो, आज वह डालो, आज यह मिठाई बनाओ, आज वह बनाओ, लेकिन स्वाद नहीं आ पाता है और उल्टा ये स्वाद क्षणभंगुर होते हैं जो कि शरीर को खराब करने वाले हुआ करते हैं लेकिन यदि हमारी जिह्वा को नाम का रस आ जाए तो फिर तो वह इतना मस्त हो जाती है कि फिर तो उसे बोलने के लिए भी मन नहीं करता है। गुरू महाराज जी ने वैसे ही भजन-बन्दगी व अरदास के बाद प्रसाद वितरण की परम्परा स्थापित नहीं की है। दरअस्ल हमारी वृत्ति उस समय भजन बन्दगी में इतना अधिक लीन हो जाती है कि वह अन्य किसी चीज को स्वीकार्य ही नहीं कर पाती है। बस कड़ाह प्रसाद का जो स्वाद है वह उसके साथ कुछ मिलता जुलता सा है। इसीलिए यह कोशिश की गई है कि इस प्रकार से बाहरी संसार में आते समय कम से कम कुछ मिलती जुलती चीज हमें मिल जाए और फिर धीरे-धीरे अन्य स्वादों का यह व्यक्ति सह लेता है। वह हमारे अन्दर एक ऐसा रस है –

ए रसना तू अन रसि राचि रही
तेरी पिआस न जाइ॥
पिआस न जाइ होरतु कितै
जिचरू हरि रसु पलै न पाइ ॥ *अंग – 921*

वह हरि रस है, हरि रस के आनन्द को वही जानता है जो कि उस रस को प्राप्त कर लेता है, दूसरे को तो इस बात का अनुभव ही नहीं हो पाता है क्योंकि जब तक उसने उस रस को देखा ही नहीं है, उस रस के स्वाद को चखा ही नहीं है तो फिर उसे उस दिव्य रस के बारे में पता कैसे चल पाएगा। इसी प्रकार से नेत्रों के सम्बन्ध में बात है कि यही नेत्र संसार को हरि जी का रूप देखते हैं और अज्ञानता के वश इसे हम संसार के रूप में देखते हैं। जब हमारे ये नेत्र ज्ञान के क्षेत्र में खुल जाते हैं तो फिर –

सभु गोबिंदु है सभु गोबिंदु है गोबिंद बिनु नही कोई॥
सूतु एकु मणि सत सहंस जैसे
ओत पोति प्रभु सोई ॥ 1 ॥ रहाऊ ॥
जल तरंग अरू फेन बुदबुदा जल ते भिंन न होई ॥
अंग – 485

फिर तो हमारी दृष्टि ही बदल जाती है। इसी प्रकार से हमें दिव्य कान प्राप्त हो जाते हैं और फिर हमें मस्त करने वाले शब्द सुनाई पड़ने लगते हैं –

अनहत बाणी थानु निराला ॥
ता की धुनि मोहे गोपाला ॥ *अंग – 186*

वह इतनी सुन्दर धुन है कि गोपाल (परमात्मा) भी उस धुन में मोहित हुआ पड़ा है। वह धुन प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर है और प्रत्येक समय चलती ही रहती है –

जिज्ञासु कहता है कि महाराज जी! हमें तो वह धुन सुनाई नहीं पड़ती है?

गुरू जी कहते हैं कि तुम तो पराकाष्ठा तक के बहरे हुए पड़े हो।

जिज्ञासु जवाब देता है कि महाराज जी! मुझे तो संसार की सारी बातें सुनाई पड़ती हैं तो फिर मैं बहरा कैसे हो गया?

गुरू जी जवाब देते हैं कि भद्रपुरुष! ये प्रकृति वाले कान तो प्रकृति की ही बातें सुनते हैं और तुम्हारे दिव्य कान अभी खुले ही नहीं हैं, जिनके खुल जाते हैं, वे फिर नाम की धुन सुनने लगते हैं और वह धुन इतनी जबरदस्त है कि व्यक्ति उसके अन्दर प्रत्येक समय मस्त रहता है। सवाल उत्पन्न होता है कि जब दिव्य कान प्राप्त हो जाते हैं तो फिर वे सुनते क्या हैं? गुरू जी कहते हैं कि फिर वह धुन प्रत्येक के अन्दर से सुनाई देने लग पड़ती है।

डा. स्वामी राम जी, अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि मेरे गुरू ने मुझसे एक बार एक क्रिया करवाई। वे कहते हैं कि मैं हैरान हो गया कि जिस गुफा में मैं बैठा था, वहाँ पर घास था लेकिन उसके अन्दर से मुझे आवाज आने लग पड़ी, मैं हैरान हो गया कि यह आवाज कहाँ से आ रही है? वे कहने लगे कि मैंने जब घास को कान लगाया तो घास में से आवाज आ रही थी, फिर मैंने वृक्ष को कान लगाया तो वृक्ष में से भी आवाज आ रही थी। उसके बाद मैंने जब पत्थर को कान लगाया तो वहाँ से भी आवाज आ रही थी। दरअस्ल वे नाम को श्रवण कर रहे थे। उसके बारे में गुरू जी गुरवाणी के अन्दर इस प्रकार का संकेत देते हैं -

धारना - नाम हरी दा जपदे सारे वणाँ दे पंखेरू।

जो बोलत है म्रिग मीन पंखेरू
सु बिनु हरि जापत है नही होर ॥ अंग - 1265

दिव्य कान नाम की धुन को सुनते हैं -

हरहट भी तूं तूं करहि बोलहि भली बाणि ॥
अंग - 1420

फरीदा हऊ बलिहारी तिन् पंखीआ जंगलि जिंना वासु॥ ककरू चुगनि थलि वसनि रब न छोडनि पासु॥
अंग - 1383

आप कहते हैं कि नाम की समझ उनके अन्दर हो चुकी है नि:शंक रूप से वे जंगलों के अन्दर रहते हैं लेकिन नाम की धुन उनके अन्दर चल रही है। मैं तो इनके ऊपर से बलिहार जाता हूँ। यह क्या बात थी? दरअस्ल उन्हें समस्त पशु-पक्षियों के अन्दर से भी वह नाम की धुन सुनाई पड़ती थी और बलिहार होकर बाबा फरीद जी इस प्रकार से कथन करते हैं कि -

धारना - कंकर चुगदे थलाँ दे विच वसदे,
रब दी ना आस छड्दे पंछी।

अब बाबा फरीद जी को कण-कण में से नाम की धुन क्यों सुनती थी? वह इसलिए सुनती थी क्योंकि उनके दिव्य श्रवण खुले हुए थे। गुरू जी कथन करते हैं कि धरती, आकाश, पाताल आदि जो कुछ भी दिखाई पड़ता है यानि कि सारी कायनात नाम का सिमरन करती है -

धरति पातालु आकासु है मेरी जिंदुड़ीए
सभ हरि हरि नामु धिआवै राम ॥ अंग - 540

अब हमें तो वह धुन सुनाई पड़ती नहीं है इसीलिए हम यह कह देते हैं कि शायद गुरू जी ने कोई अलंकारिक बात ही कह दी हो।

साधु संगत जी! श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर कोई भी अलंकारिक बात न होकर सारी बातें तत्व की ही हैं यानि कि सारी सच्ची बातें हैं। अब हमें इन बातों के बारे में यदि पता नहीं चल पा रहा है तो इसके गलत अर्थ नहीं निकालने चाहिए। अत: ये सारी बातें प्रत्यक्ष हैं -

प्रथम ओअंकार तिन कहा सो धुन पुर जगत मो रहा।

जो धुन सारे संसार में भरी पड़ी है, वह लगातार चल रही है लेकिन हमें वह धुन सनाई नहीं पड़ती है। गुरू जी कहते हैं कि -

धुनि महि धिआनु धिआन महि जानिआ
गुरमुखि अकथ कहानी ॥ अंग - 879

हम लोग तो इसके कुछ और ही अर्थ कर देते हैं लेकिन यह तो सीधी बात है कि उस धुन में जिसका ध्यान जुड़ जाता है तो उसे यह दिव्य रस प्राप्त हो जाता है। उसे शब्द धुन कहते हैं और उसके बारे में गुरू जी कहते हैं कि -

बिनु सबदै अंतरि आनेरा ॥ अंग - 124

यदि अन्दर शब्द की धुन सुनाई नहीं पड़ी तो फिर हमारा अन्त:करण अन्धकार से भरा पड़ा रहता है -

न वसतु लहै न चूकै फेरा ॥ अंग - 124

यही कारण है कि न तो हमें आत्म वस्तु की ही प्राप्ति हो पाती है और न ही हमारा जन्म-मरण का चक्र समाप्त हो पाता है -

सतिगुर हथि कुंजी होरतु दरू खुलै नाही
गुरू पूरै भागि मिलावणिआ ॥ अंग - 124

वह कुंजी या चाभी गुरू जी के पास है।

'चलता'

सासि सासि सिमरहु गोबिंद

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

अब कलू आइओ रे ॥ इकु नामु बोवहु बोवहु ॥
अन रूति नाही नाही ॥ मतु भरमि भूलहु भूलहु ॥
अंग - 1185

परम सम्माननीय गुरू प्यारी साधु संगत जी! सतगुरू जी के चरणों के साथ आप जुड़े हो, महापुरुषों के द्वारा दर्शाई गई युक्ति का श्वासों के द्वारा अभ्यास, गुरु मन्त्र का अभ्यास आप सबने संगत रूप में यानि कि सामूहिक रूप से किया। महापुरुषों के द्वारा अपनी अमेरिका प्रचार फेरी के दौरान विशेष तौर पर यहाँ कृपा की है अर्थात इस धरती को यह गौरव प्राप्त है कि -

जिथै बैसनि साध जन सो थानु सुहंदा ॥ अंग - 319

महापुरुषों के जब यहाँ पर चरण पड़े तो आप बहुत खुश हुए क्योंकि ऐसी खुशी, बहुत कृपा प्रदान करती है। कोई पूर्वजन्म का कम ̍-

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे
भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ॥
मिटिओ अंधेरू मिलत हरि नानक
जनम जनम की सोई जागी ॥ अंग - 204

जब प्रकट होता है तो रसिक पुरुषों का मिलाप होता है। उन्होंने हमें युक्ति प्रदान की क्योंकि महापुरुषों के पास युक्ति होती है कि जीव को 'नाम' तक पहुँचाना कैसे है। जीव तथा ब्रह्म की अभेदता कैसी होनी है। वे अभेद पुरुष, जिनके मिलने से जन्म जन्मान्तरों की सोई हुई सुरति जाग गई, आप योग्य पात्र जानकर वचन करते हैं और श्रद्धालुजनों की श्रद्धा भावना को फल लगा, जिसके फलस्वरूप उन्होंने यह युक्ति दर्शाई। अन्यथा महापुरुष तो मौज के मालिक होते हैं और सुरति किस प्रकार से जागृत होती है? सुरति तो अभ्यास के द्वारा जागृत होती है। गुरुमन्त्र का अभ्यास करके ही हउमै दूर होती है -

वाहिगुरू गुरमंत्र है जपि हउमै खोई॥
भाई गुरदास जी, वार 13/2

यह जो गुरमन्त्र है इसे धन्य श्री गुरू नानक देव जी 36 युगा की कमाई के बाद कल्युग में लेकर आए हैं। कल्युग में यही नाम फलदायी है। इस युग में और कोई नाम बोने की ऋतु ही नहीं है। इसलिए हमें इसी नाम के साथ जुड़ना चाहिए। गुरू घर में वैसे तीन मन्त्र माने जाते हैं। जिज्ञासु की अवस्था को देखकर महापुरुष युक्ति बतला दिया करते हैं। माला मन्त्र में जपुजी साहिब के पाठ बार-बार बतलाए जाते हैं कि 25 पाठ प्रतिदिन विधिपूर्वक कर लो। ऐसा करने पर कोई भी काम ऐसा नहीं है जो कि न हो सके। इसी प्रकार से आदि मन्त्र चला आता है जो कि ओ३म से शुरू होकर नमः पर समाप्त होता है। इस प्रकार से विधियाँ होती हैं। श्री गुरू नानक जी ने कृपा की कि इसे कोष्ठक में रखकर इसके आगे 1 लगा दिया १ओअंकार, शुरुआती अवस्थाओं में महापुरुष पाठ बतला दिया करते हैं कि तुम 25 जपुजी साहिब के पाठ प्रतिदिन करो। उसके बाद महामन्त्र बतलाते हैं, जैसे कि मूल मन्त्र है, बतला देते हैं कि मूलमन्त्र १ओअंकार से लेकर 'नानक होसी भी सचु' तक करो।

चलो आज का दीवान तो अत्यन्त व्यस्तता से भरा हुआ है इसलिए सविस्तार विचार के लिए उपयुक्त समय नहीं है। इसके बाद फिर महापुरुष बतला देते हैं कि इसके बाद '१ओंकार सतिनामु वाहिगुरू' तक कर लो और इसके बाद 'वाहिगुरू' गुरुमन्त्र तक ले आते हैं, जिसका अभ्यास आप सबने कितने प्यारपूर्ण ढंग से 45 मिनटों तक किया यानि कि उस दिव्यारस का रसास्वादन किया। इस रस से तो बाहर आना ही बहुत कठिन हो जाता है। आप सब अत्यन्त सौभाग्यशाली हो जो कि प्रत्येक सप्ताह इस परिपाटी को कायम रखे हुए हो और उसे आगे बढ़ा रहे हो हमारी कामना है कि इसके साथ इसी प्रकार से जुड़े रहो। अपनी-अपनी अवस्था के अनुसार करते रहो और चार वाणियाँ हैं, पहले बोल कर किया उसके बाद उसे अपने अन्दर सुनो। सुनने के महात्म्य को हम नित्य प्रतिदिन चार पउड़ियों के रूप में जपुजी साहिब में पढ़ते हैं और उसके द्वारा कितनी बड़ी-बड़ी अवस्थाएँ प्राप्त हो जाती हैं। इसके बाद गुरू जी की और कृपा हो जाती है, फिर हम सीधे बैठकर एकान्त में अपनी सुरति को उस शब्द के साथ जोड़ते हैं। सीधे बैठने से दिव्य

ऊर्जा का प्रवाह ऊर्ध्वगामी होने लगता है। इससे पहले हमें सम, दम, यम, नियम और इनके दस-दस अंगों का पालन करना पड़ता है क्योंकि -

विणु गुण कीते भगति न होइ ॥ अंग - 4

बिना शुभ गुणों को धारण किए भक्ति नहीं की जा सकती है। बन्दगी के लिए आप किसी भी आसन में, जो आपको सरल प्रतीत हो बैठा जा सकता है जैसा कि चौकड़ी मार कर, घुटनों पर हाथ रख कर बैठ जाओ और नेत्रों को बन्द कर लो। इसे सुखासन कहते हैं। रीढ़ की हड्डी को सीधी रखो तथा शरीर को ढीला छोड़कर देखो कि तुम्हारा श्वास आ रहा है और जा रहा है। यह तो कोई भी अनजान से अनजान व्यक्ति भी कर सकता है। यह देखो कि कितनी आसान विधि हमारे लिए गुरू जी ने मुहैया करवा दी है क्योंकि 'कलजुग नानकु नामु सुखाला।' उस समय जब श्वास अन्दर की तरफ जाए तो अन्दर प्राण वायु (आक्सीजन) अधिकाधिक रूप से अन्दर आने दो उसके बाद पूरी तरह से बाहर की ओर छोड़ो। शनैः शनैः मन, श्वास पर ध्यान केन्द्रित करने लगेगा, फलस्वरूप वह टिकाव में आना शुरू हो जाएगा क्योंकि सारा सम्बन्ध तो मन का ही है -

कहै कबीरू सुनहु रे संतहु
इहु मनु ऊडन पंखेरू बन का ॥ अंग - 1253

वास्तविक सम्बन्ध तो मन का ही है क्योंकि तन तो हमने हाजिर कर लिया है, गुरू चरणों में आ गए हैं लेकिन अब वास्तविक कार्य यह है कि हम मन के साथ बात करें क्योंकि असली कार्य तो मन का ही है -

ममा मन सिऊ काजु है मन साधे सिधि होइ ॥
मन ही मन सिऊ कहै कबीरा
मन सा मिलिआ न कोइ ॥ अंग - 342

मन जो है यह श्वास पर सवार होकर दौड़ता है। तन तो यहाँ पर बैठा हुआ है लेकिन मन तो न जाने कहाँ-कहाँ पर चला जाता है। इसीलिए महापुरुष यह युक्ति बतलाते हैं कि अपने श्वास को देखो। यदि 45 मिनटों तक शरीर का कोई अंग न हिले तो समझो कि यह आसन सिद्ध हो गया। इसके बाद है - प्राणायाम। प्राणायाम के अन्दर पुनः एक छोटी सी युक्ति महापुरुष बतलाते हैं कि इस प्रकार से करो-

सासि सासि सिमरहु गोबिंद ॥
मन अंतर की ऊतरै चिंद ॥ अंग - 295

यदि आप श्वास-श्वास सिमरन करोगे तो फिर आपकी सारी चिन्ताएँ समाप्त हो जाएँगी। श्वास को तटस्थ होकर देखो और गहरा श्वास लो जिसमें कि कम से कम 15 सेकेंड का समय लगे और फिर बढ़ाते-बढ़ाते एक मिनट तक भी हो जाता है। यह सब अभ्यास पर निर्भर करता है। जब श्वास अन्दर की तरफ जाता है तो 'वाहि' कहो और जब बाहर की तरफ श्वास को छोड़ा जाता है तो उस समय 'गुरू' कहो।

महापुरुष द्वारा लिखित एक बहुत ही सुन्दर पुस्तक है 'सुरति शबद मार्ग' उसे पढ़कर बहुत ही सरल मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं। धन्य श्री गुरू गोबिंद सिंह महाराज जी ने माता जीतो जी को जो गुरमति योग समझाया था, उसकी बहुत ही सरल व्याख्या करते हुए महापुरुषों ने अत्यन्त सरल भाषा में कलमबन्द किया है। यह पुस्तक के रूप में सुलभ है। इसमें यह बतलाया गया है कि किस प्रकार से प्राणायाम करना है। उसके बाद फिर निध्यासन होता है। मन बार-बार बाहर की तरफ दौड़ता है। इसे रोकने के लिए अपने श्वास को थोड़ा-थोड़ा लम्बा करने की कोशिश करो -

बारं बार बार प्रभु जपीऐ ॥
पी अंम्रितु इहु मनु तनु ध्रपीऐ ॥ अंग - 286

बार-बार करते जाओ क्योंकि -

मन लोचै बुरिआईआ। गुर सबदी इहु मन होड़ीऐ।

शब्द तो धुन है, इसलिए इसकी एक धुन बना लो और हमारे अन्दर एक ऐसी ही रसयुक्त धुन है जिसके बारे में गुरवाणी का फुरमान है कि -

अनहत बाणी थानु निराला ॥
ता की धुनि मोहे गोपाला ॥ अंग - 186

धुनि महि धिआनु धिआन महि जानिआ
गुरमुखि अकथ कहानी ॥ अंग - 879

नाभि पर जोर देकर, श्वास की मदद से सुरति उसी दिशा में लेकर जाओ जिस दिशा से वह धुन आ रही है। शब्द है धुन और यह यही रास्ता इस घर का है -

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नै साणे ॥ सुरति सबदि भव सागरू तरीऐ नानक नामु वखाणे॥
अंग - 938

प्राणों की मदद से जब हम अपनी सुरति को ऊँचा उठाते हैं तो फिर शब्द के साथ मिलाप हो जाता है क्योंकि-

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए
सु भलके ऊठि हरि नामु धिआवै ॥ अंग - 304

जिस प्रकार से बच्चों को पाठशाला में बैठने का ढंग

सिखाया जाता है कि ध्यान में बैठो। इसी प्रकार से यहाँ एक धुन है, महापुरुषों का ओरा है, जिसके फलस्वरूप सुरति अपने आप ही शब्द के साथ जुड़ने लगती है क्योंकि यह पवित्र स्थान है। उसके बाद -

ऊदमु करे भलके परभाती
इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥ अंग - 305

उस नाम रूपी अमृत के सरोवर में स्नान करो -

नऊ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु ॥
देही महि इस का बिस्रामु ॥ अंग - 293

ऊपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै
सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ॥
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै
बहदिआ ऊठदिआ हरि नामु धिआवै ॥
जो सासि गिरासि धिआइे मेरा हरि हरि
सो गुरसिखु गुरू मनि भावै ॥ अंग - 305

जो इस प्रकार की दिनचर्या को अपनाता है, वह सिक्ख गुरू को बहुत ही प्यारा लगने लग पड़ता है। यह गुप्त रास्ता है, इस पर आगे-आगे बढ़ते जाओ।

'आत्म मार्ग' सन्तजनों का मार्ग व धर्म की सीढ़ी है। इस पर चलते जाओ, कदम-दर-कदम आन्तरिक अवस्थाएँ स्वतः ही खुलती चली जाएँगी। संगत में आकर इस प्रकार से करते रहो, फिर जहाँ पर भी सेवा मिली है, उस सेवा को करते रहो। आन्तरिक तौर पर यह करते रहो और बाहरी तौर पर सेवा कार्य करते रहो क्योंकि ऐसा करने के लिए गुरवाणी में बार-बार जोर दिया जाता है।

अतः आओ! यह तो सारा तरीका है। यह है तो आन्तरिक मार्ग लेकिन दयावान व कृपावान महापुरुषों ने अपनी कृपा करके हमें यह सारा मार्ग खोलकर समझा दिया है। आपने हम सबके भले के लिए आत्म मार्ग मैगजीन चलाई, पुस्तकें लिखवाईं, सभी गुरवाणी के प्रकाश में, अन्दर के मार्ग को खोलती हैं, इन पर विचार करो। फिर पता चल जाता है कि हमने किस प्रकार से इस मार्ग पर आगे बढ़ते जाना है। निध्यासन के बाद फिर धारना है, ध्यान है और सबसे बाद में आती है - समाधि। ये सब आन्तरिक अवस्थाएँ हैं। एक साविकल्प समाधि है जिसमें संकल्प-विकल्प है, इसमें पता चल जाता है कि हम कितने समय से इस समाधि में बैठे हुए हैं। अब हम लोगों को यह पता चल गया है कि लगभग 45 मिनट हम लोगों ने महापुरुषों द्वारा दर्शाई गई युक्ति के अनुसार श्वास के माध्यम से अभ्यास किया है। दूसरी होती है - निर्विकल्प समाधि, इसमें कोई भी संकल्प या विकल्प नहीं होता है। जब हम इस प्रकार के वातावरण में बैठकर नित्तनेम करते हैं तो फिर समय का तो पता ही नहीं चलता है। सिक्ख की जो परिभाषा है वह इस शब्द में दी गई है -

जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि
सो गुरसिखु गुरू मनि भावै ॥
जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी
तिसु गुरसिख गुरू ऊपदेसु सुणावै ॥
जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥ अंग - 306

फिर उस सिक्ख को गुरू जी वह उपदेश दृढ़ करवा देते हैं जो कि जीव और ब्रह्म की अभेदता स्थापित कर देता है तथा जिसका उल्लेख गुरवाणी में हैं, फिर इस प्रकार के गुरसिक्ख की यह ड्यूटी लग जाती है कि वह स्वयं भी नाम का जप करे तथा अन्य लोगों को भी नाम सिमरन के लिए प्रेरित करे।

अतः अमेरिका के इस स्थान पर महापुरुष आए थे। महापुरुषों के बाद भी संगत का उत्साह पूर्ववत् बरकरार है। कल्युग के प्रभाव से यह संगत बहुत ऊपर है अर्थात आप सब पर गुरू जी व महापुरुषों की अपार कृपा है, भविष्य में भी आप सब इसी प्रकार से लगे रहो -

आगाहा कू त्राघि पिछा फेरि न मुहडड़ा ॥
अंग - 1096

गुरू जी कहते हैं कि इस मार्ग पर जब चल पड़ो तो फिर पीछे की तरफ जरा सा भी मुड़कर न देखो -

नानक सिझि इवेहा वार बहुड़ि न होवी जनमड़ा ॥
अंग - 1096

जब हम इस मार्ग पर शनैः शनैः चलते रहते हैं तो फिर एक दिन हमें वह अवस्था मिल ही जाती है जिसे कि सहज समाधि कहा जाता है -

सहज समाधि लगी लिव अंतरि
सो रसु सोई जाणै जीऊ ॥ अंग - 106

जो भी व्यक्ति इस द्वार पर श्रद्धा की झोली को लेकर आता है तो फिर ऐसा कोई कारण नहीं है कि वह यहाँ से खाली लौटे। अतः जब हम श्रद्धाभावना के द्वारा इस मार्ग पर चलते हैं तो फिर सतगुरू जी स्वयं ही कृपा कर देते हैं,

(शेष पृष्ठ 45 पर)

गुरबाणी अर्थ भण्डार

सन्त हरी सिंह जी रन्धावे वाले

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जनवरी, पृष्ठ - 44)

सिरीरागु महला 3
जिनी इक मनि नामु धिआइआ
गुरमती वीचारि॥

हे बन्धु! जिनी = जिन्होंने इक मनि = एकाग्र चित्त होकर परमेश्वर के नाम को धिआइआ = नाम की आराधना की है तथा गुरमती = गुरू जी की शिक्षा के अनुसार सदैव सत्य की विचार की है अथवा जिन्हें गुरमति की विचार प्राप्त हुई है।

तिन के मुख सद ऊजले तितु सचै दरबारि॥

तितु = उस सचै = सच्चे परमात्मा की साधु संगति, सच्चखण्ड रूपी दरबार में तिन = उनके अन्तःकरण रूपी मुख सदैव ही उजले = उज्ज्वल या पावन होते हैं।

ओइ अंम्रितु पीवहि सदा सदा सचै नामि पिआरि॥

ओइ = वे गुरुमुखजन, गुरू द्वारा प्रदत्त नाम रूपी अमृत को अथवा ब्रह्मानन्द रूपी अमृत को सदैव सदैव ही पीवहि = पीते हैं तथा सचै = सच्चे परमात्मा के साथ पिआरि = स्नेह करते हैं।

भाई रे गुरमुखि सदा पति होइ॥

हे बन्धु! गुरुमुखजनों का सदा = हमेशा ही लोक व परलोक में पति = सम्मान होता है।

हरि हरि सदा धिआईऐ
मलु हउमै कढै धोइ॥रहाऊ॥

हे बन्धु! उस हरि = प्रभु जी की सदा = हमेशा ही धिआईऐ = अराधना करो जो कि सभी को हरि = हरा-भरा करने वाला है क्योंकि परमात्मा का नाम हउमै = अहंभाव की मैल को धोकर हृदय में से बाहर निकाल देता है भावार्थ नाम रूपी साबुन के प्रेम रूपी जल को लेकर युक्तियों रूपी थापों के द्वारा बुद्धि, शरीर अथवा मन रूपी कपड़े की मैल को धोया जाता है।

मनमुख नामु न जाणनी विणु नावै पति जाइ॥

जो मनमुख लोग प्रभु जी के नाम को न जाणनी = जानते ही नहीं है, उनकी प्रभु जी के नावै = नाम के बिना लोक व परलोक में से पाति जाइ = इज्जत चली जाती है, भावार्थ वे काम व क्रोधादि विकारों के कारण इस लोक में भी अपमानित होते रहते हैं तथा नाम से खाली होने के कारण परलोक में भी सम्मान प्राप्त नहीं कर पाते हैं।

सबदै सादु न आइओ लागे दूजै भाइ॥

उन मनमुखों को सबदै = गुरू जी के उपदेश का सादु = रस नहीं आ पाता है क्योंकि वे तो हमेशा दूजै भाई = द्वैत भाव में ही लागे = लगे रहते हैं, भावार्थ वे तो प्रत्येक समय बुराइयों में ही लिप्त रहते हैं।

विसटा के कीड़े पवहि विचि विसटा
से विसटा माहि समाइ॥

इस प्रकार के पुरुष पहले भी नर्क अथवा माता के गर्भ रूपी विसटा = गन्दगी के कीड़े थे और वर्तमान समय में भी विषय-विकारों या बुरे कर्मों रूपी विसटा = गन्दगी में पवहि = पड़े रहते हैं और वे मरणोपरान्त भी योनियों या नर्कों रूपी विसटा = गन्दगी में ही समाइ = धकेल दिए जाएँगे।

तिन का जनमु सफलु है जो चलहि सतगुर भाइ॥

तिन का = उन गुरुमुखों का मनुष्य जन्म सफलु = सफल अथवा ज्ञान रूपी (स+फलु) फल सहित है जो सतगुरू जी के भाइ = हुक्म मे होकर अथवा भाइ = प्रेम में चलते हैं।

कुलु ऊधारहि आपणा धंनु जणेदी माइ॥

वे गुरुमुखजन अपना तथा अपनी कुलों का उद्धार कर लेते हैं।

उन गुरुमुखों को जणेदी = पैदा करने वाली माइ = माता भी धंनु = धन्य है। यथा -

हरि हरि नामु धिआईऐ
जिस नऊ किरपा करे रजाइ॥

हे बन्धु! हरि = सबको हरा-भरा करने वाले प्रभु जी अथवा सबके हरि = पापों का नाश करने वाले प्रभु जी का नाम सिमरन करो लेकिन सिमरन तो वही करता है जिस नउ = जिसके ऊपर उस रजाइ = रजा में चलाने वाला प्रभु जी अपनी कृपा दृष्टि करता है अथवा वे गुरुमुखजन ही सिमरन करते हैं जो प्रभु जी की कृपा के फलस्वरूप प्रभु जी की आज्ञा में रहते हैं।

जिनी गुरमुखि नामु धिआइआ
विचहु आपु गवाइ॥

जिनी = जिन गुरुमुखों ने उसके पात्र बनकर उसके नाम का सिमरन किया है, वे अपने विचहु = अन्दर से आपु = अहंभाव को गवाइि = समाप्त कर लेते हैं।

ओइ अंदरहु बाहरहु निरमले सचे सचि समाइ॥

वे गुरमुखजन अपने अंदरहु = अन्तःकरण में से भी और बाहरहु = बाह्य शरीर के तौर से भी निरमले = शुद्ध स्वरूप अथवा उज्ज्वल हो जाते हैं तथा वे सच्चे नाम को जप कर सत्य स्वरूप में समाइि = समा जाते हैं।

नानक आए से परवाणु हहि
जिन गुरमती हरि धिआइ॥

गुरू जी फुरमान करते हैं कि ऐसे पावन जीवन वाले गुरुमुखजन ही संसार में आए हुए परवाणु = सफल हैं जिन्होंने गुरमती = गुरू जी की मति के अनुसार अथवा उनकी शिक्षा के अनुसार हरि = प्रभु जी की आराधना की है अथवा प्रभु जी का नाम सिमरन किया है।

सिरीरागु महला 3
हरि भगता हरि धनु रासि है
गुर पूछि करहि वापारू॥

हरि भगता = प्रभु जी के भक्तों के पास हरि धनु = प्रभु जी के नाम रूपी धन की रासि = पूँजी है और वह गुर = सतगुरू जी को पूछि = पूछकर नाम का जप करते हैं तथा अन्य लोगों को नाम जपाने स्वरूप वापारु = व्यापार करहि = करते हैं।

हरि नामु सलाहनि सदा सदा
वखरू हरि नामु आधार॥

उह भगत = प्रभु जी के भक्तों के पास हरि धनु = प्रभु जी के नाम रूपी धन की रासि = पूँजी है और वे गुर = सतगुरू जी को पूछि = पूछकर स्वयं भी नाम जपते हैं तथा अन्य लोगों को भी नाम जपाने रूपी वापारु = व्यापार करहि = करते हैं।

हरि नामु सलाहनि सदा सदा
वखरू हरि नामु अधारू॥

वे भक्तजन हमेशा ही हरि नामु = प्रभु जी के नाम की स्तुति करते हैं तथा हरि नाम = प्रभु जी का नाम रूपी वखरु = नाम रूपी लाभदायक व्यापार ही उनका अधारु = आधार है।

गुरि पूरै हरि नामु दिड़ाइआ
हरि भगता अतुटु भंडारू॥

उन्हें पूरे सतगुरू जी हरि नामु = प्रभु जी का नाम द्रिड़ाइआ = दृढ़ करवाया है इसीलिए उन हरि भगता = उन परमात्मा के भक्तों को अतुटु = कभी भी समाप्त न होने वाला नाम रूपी भंडारु = खजाना प्राप्त हुआ है।

भाई रे इसु मन कऊ समझाइ॥

हे भाई! इस मन कउ = को गुरु-उपदेश द्वारा समझाइ = समझाओ।

ए मन आलसु किआ करहि
गुरमुखि नामु धिआइ॥ रहाऊ॥

कि ए मन! तुम आलसु = आलस्य किआ = क्या करहि = करते हो? बल्कि तुम्हें तो गुरुमुखजनों की संगत करके नाम का धिआइ = जप करना चाहिए।

हरि भगति हरि का पिआरू है
जे गुरमुखि करे बीचारू॥

जे = जो गुरमति द्वारा गुरुमुख बनकर सत्संगत में निज स्वरूप का विचार करे = करते हैं वही हरि जी की सच्ची भगति = भक्ति करते हैं तथा उन्हीं के हृदय में हरि = परमात्मा की भक्ति का पिआरु = स्नेह है।

पाखंडि भगति न होवई दुबिधा बोलु खुआरू॥

हे बन्धु! पाखण्ड करने से परमात्मा की भगति = भक्ति नहीं होवई = होती है भावार्थ जो पाखण्डी पुरुष हैं, वे बाहरी तौर पर तो आँखें बन्द कर-करके दिखाते हैं तथा अन्य विभिन्न प्रकार के दिखावे करते हैं, लेकिन आन्तरिक तौर पर भक्ति से कोसों दूर ही होते हैं और इस प्रकार से भक्ति नहीं हुआ करती है।

वे तो दुविधा = द्वैतभाव के कारण जो भी बोलते हैं, उसके फलस्वरूप वे उल्टा खुआरु = दुखी ही होते हैं।

सो जनु रलाइआ ना रलै
जिसु अंतरि बिबेक बीचारू॥

(शेष पृष्ठ 44 पर)

नूरानी मिलाप - 5

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

(श्री गुरू नानक देव जी महाराज जी के 2019 में 550 वर्षीय प्रकाश शताब्दी को समर्पित)

मै मूरख की केतक बात है कोटि पराधी तरिआ रे॥
गुरु नानकु जिन सुणिआ पेखिआ से फिरि गरभासि न परिआ रे॥

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जनवरी, पृष्ठ - 45)

नूरानी मिलाप का प्रताप

श्रद्धा, प्यार व वैराग्य की मूर्ति - राए बुलार

क्षेत्र का मुसलमान हाकिम राए बुलार जी पूर्वजन्म के किए गए पुण्य कर्मों के कारण श्रद्धा, प्यार व वैराग्य की मूर्ति थी। सांसारिक प्राप्तियों को प्राप्त कर चुके राए बुलार जी सतगुरू नानक देव जी के ऊपर अथाह श्रद्धाभाव रखते थे। वे गुरुदेव को साक्षात अल्लाह का रूप जानते व समझते ही नहीं थे बल्कि अन्य लोगों को इस भावना के प्रति उत्सुक करने के लिए प्रत्येक समय प्रेरणा भी करते रहते थे।

एक दिन शिकार करने के बाद वापिस लौटते समय राए बुलार जी ने क्या देखा कि बालक गुरू नानक देव जी लेटे हुए हैं और उनके नूरानी चेहरे पर आई हुई कुदरती धूप को रोकने के लिए साँप अपना फन फैलाए हुए दिखाई दे रहा है। उस समय आप (राए बुलार जी) घबरा कर एकदम घोड़ी से उतर गए और नजदीक होकर देखने की कोशिश की लेकिन साँप तुरन्त ही अपनी बिल में घुस गया। इतनी देर में गुरुदेव जी सतिनाम का जप करते हुए उठकर बैठ गए। राए जी ने उस समय पहली बार सतगुरू जी के चेहरे पर दिव्य नूर झलकता हुआ देखा। उस समय राए जी और भी अधिक श्रद्धा और प्यार में आ गए तथा आपने सिर झुकाया और नमस्कार की। आप श्रद्धाभावना को प्रकट करते हुए तथा एक दिव्य रंग में रंगे हुए बोले, हे वली नानक! आप जी तो अल्लाह की एक विशेष जाति हो और अल्लाह की खास कृपा आप जी के ऊपर है। सतगुरू जी ने गम्भीरता भरी मुस्कुराहट सहित जवाब दिया, हे राए बुलार जी! सभी लोग परमात्मा के विशेष बन्दे हैं बशर्ते वे स्वयं को पहचान लें।

दिव्य वचन सुनकर राए जी की श्रद्धा अन्तिम सीमा तक पहुँच गई और आपने सतगुरू जी के चरणों पर नमस्कार की। नूरों के नूर ने कल्याण के लिए वचन किया कि राए जी! सतिनाम का जप किया करो क्योंकि जीव का कल्याण तो भजन-बन्दगी में ही है। रूह की कल्याणार्थ यह राए जी को पहला उपदेश था। गुरू जी से उपदेश लेकर वह गुरू जी का हमेशा के लिए श्रद्धालु हो गया। दर्शनों व वचनों से प्रभावित राए जी ने पिता मेहता कल्याण दास जी को बुलाकर समझाया कि आप नानक को केवल अपना पुत्र ही मत समझो बल्कि वे तो सारी मानवता के पिता हैं, वे सारी मानवता के पैगम्बर व अल्लाह रूप हैं। इसलिए आप पुत्र भावना से ऊपर उठो और उनसे घरेलू कार्य मत लो। वे तो सारी कायनात के कार्यों को संवारने के लिए आए हुए हैं। ऐसी नूरानी मिलनी राए जी की सतगुरू नानक देव जी के साथ हुई। इसके बाद आन्तरिक तौर पर हमेशा के लिए राए जी सतगुरू जी के प्रति प्यार व सम्मान भरा जीवन व्यतीत करते रहे।

एक बार ऐसे महत्वपूर्ण वचन राए जी को सतगुरू जी ने किए थे, जिस समय कि सतगुरू जी तलवंडी से सुल्तानपुर जाने के लिए तैयार हुए थे। राए जी ने श्रद्धा सहित सतगुरू जी को प्रीति भोज पर बुलाया और जब सतगुरू जी विदा होने लगे तो राए बुलार जी ने पूछा हे सतगुरू जी! आप जी अब सुल्तानपुर जा रहे हो, न जाने दोबारा आपके दर्शन कब होंगे इसलिए आप मेरे लिए कोई उपदेश करके जाओ। प्रेम में भीगे हुए सतगुरू जी ने फुरमाया कि राए जी! जब आपका बल कार्य न करे तो विनम्रता में आकर निरंकार की शरण में पड़ जाना तथा अरदास में जुड़ जाना। बस निरंकार को आप, अपने आपको सौंप देना फिर वह अपने विरद की लाज स्वयं ही रखेगा और फिर आपको किसी भी बात का दुख

नहीं रहेगा बल्कि आप सदैव ही बुल्नदावस्था में रहोगे। ऐसा गुरवाणी का फुरमान है -

आपु छडि सदा रहै परणै गुर बिनु अवरू न जाणै कोइ॥ *अंग - 920*

अपने अहंभाव का त्याग करके व अपने बल को छोड़कर परमेश्वर की शरण लेकर अरदास में जुड़ जाना, यही सम्पूर्ण जीवन के लिए प्रमुख मार्ग है। इस प्रकार के उपदेश को प्राप्त करके राए बुलार जी हमेशा-हमेशा के लिए सतगुरू जी के प्यार में रंगे गए और इस रूहानी मिलाप में से प्राप्त किए गए नूरानी प्रकाश में अपना सारा जीवन व्यतीत किया।

पिता मेहता कल्याण दास जी को एक बार नहीं बल्कि अनेकों बार समझाया कि मेहता जी! आप इन्हें साधारण बालक मत समझो बल्कि ये तो स्वयं खुदा का नूर हैं इसलिए इन्हें सख्त शब्द कभी मत बोलना। तुम तो बहुत ही भाग्यशाली हो जो कि नूरों के नूर ने तुम्हारे गृह में प्रकाश लिया है। उस समय आपने एक सुन्दर पोशाक, सतगुरू जी को भेंट की। आपने भविष्य में भी उनकी प्रत्येक प्रकार की जरूरत को पूरा करने के लिए तैयार रहने की बचनबद्धता प्रकट की।

फिर भी बाबा मेहता जी का मन इस बात पर टिका नहीं क्योंकि आप हमेशा ही सांसारिक रूप से कामयाब होने का फिक्र करते थे जबकि बालक नानक जी तो प्रत्येक समय एकान्तवास होकर किसी दिव्य रंग में रंगे रहते हैं। राए जी ने पुनः समझाया कि बाबा मेहता जी! तुम्हारी बुद्धि, सांसारिक धन को प्राप्त करने में फँसी हुई है। दिव्य रंग व दैवी गुणों से तुम कोसों दूर हो। आप कोई भी फिक्र न करो, सब कुछ अपने आप ही सही हो जाएगा। राए बुलार जी की श्रद्धा व प्यार का प्रत्यक्ष उदाहरण उस समय सामने आया जबकि बीस रुपए देकर सच्चे सौदे के समय भूखे साधुओं को भोजन खिलाने पर पिता जी के क्रोध का शिकार सतगुरू जी को होना पड़ा लेकिन राए जी ने उस समय कहा कि कभी भी सतगुरू जी के कार्यों पर सवाल ही नहीं उठाने जितने धन की जरूरत हो उसे मैं हाजिर करूँगा लेकिन मैंने दिव्य नूर के प्रकाश को सेक नहीं लगने देना।

एक दिन राए बुलार जी घोड़े पर चढ़कर आ रहे हैं। आगे जाकर आपने देखा कि समाधि में लीन सतगुरू जी दिव्य रंग में रंगे हुए सुशोभित हैं। श्रद्धा में आकर दूर से ही घोड़े से एकदम नीचे उतरे और हाथ जोड़कर खड़े हो गए। आपने मन ही मन में दिली भावनाओं के साथ अरदास की। अन्तर्यामी सतगुरू जी ने अपने पावन नेत्र खोले और दाहिनी हाथ पर कमल खड़ा किया तथा मधुर आवाज में वचन किया और अरदास कबूल हुई। हृदय की भावना व वेदना पूरी होने का वचन लेकर व कृतार्थ होकर राए जी लौट आए। एक साल पूरा होने पर पहले ही राए जी के घर में खुशियों ने दस्तक दी और वारिस (बेटे) ने जन्म लिया। दरअस्ल उसके दिल में प्रत्येक समय एक भय बना रहता था कि राजभाग की सम्भाल कौन करेगा? सारे इलाके में हुक्म चलता है लेकिन वारिस न होने की फिक्र प्रत्येक समय दिल को लगी रहती थी। मन में की गई अरदास पूरी होने पर राए जी की श्रद्धा और भी अधिक श्रद्धा बढ़ गई कि ये तो स्वयं ही खुदा का नूर हैं और सर्व कला समर्थ हैं। इनके पास आकर तो जो भी मांगो मिल जाता है और मन मांगी मुरादें पूरी होती हैं लेकिन आवश्यकता है श्रद्धा भावना की। राजभाग के मालिक, वारिस के जन्म लेने की खुशी में राए बुलार जी सब कुछ सतगुरू जी का ही समझने लग पड़े। वे केवल अपने मन में ही ऐसा नहीं समझते थे बल्कि आपने अपना सब कुछ उन्हें अर्पित भी कर दिया जैसे कि गुरवाणी का फुरमान है -

कबीर मेरा मुझ महि किछु नही जो किछु है सो तेरा॥
तेरा तुझ कउ सऊपते किआ लागै मेरा ॥
अंग - 1375

इसके बाद आप समर्पण भावना लेकर विचरण करने लग पड़े। पवित्र बाणी का फुरमान है -

जो मागहि ठाकुर अपुने ते सोई सोई देवै ॥
नानक दासु मुख ते जो बोलै ईहा ऊहा सचु होवै ॥
अंग - 681

साचे साहिबा किआ नाही घरि तेरै ॥
घरि त तेरै सभु किछु है जिसु देहि सु पावए ॥
अंग - 917

उपर्युक्त शबदों के अनुसार समस्त चीजों के स्वामी तो गुरू जी स्वयं ही हैं। इसी प्रकार की भावना राए जी की हमेशा-हमेशा के लिए बन गई।

एक समय जब राए जी ने अपने पैतृक नगर के नाम की खोज पड़ताल की। इसके पिता के नाम पर ही इस नगर का नाम था - राए भोइं की तलवंडी। सतगुरू जी के प्यार

(शेष पृष्ठ 45 पर)

कलम हुए शीश को हथेली पर टिकाने वाले कलम व कृपाण के धनी शहीद बाबा दीप सिंह जी

रणजीत सिंह राणा

सन् 1999 ई. की बैसाखी को साहिब श्री गुरू गोबिंद सिंह जी द्वारा किए गए खालसा पंथ के सृजन की अलौकिक लीला ने गुरू नानक नाम लेवा सिक्खों को पूरी तरह से श्री आनंदपुर साहिब के साथ जोड़ दिया। सुदूरवर्ती गाँवों व कस्बों में रहने वाले सिक्ख भी 'सिंह' उपाधि को ग्रहण करने के लिए व सतगुरू जी के दर्शन-दीदार करने के लिए, विशेष रूप से समूहों व जत्थों के रूप में आने लग पड़े। इसी प्रकार के भाग्यशाली परिवारों में से एक था - भाई भगतू जी का परिवार। अपने सारे परिवार को सतगुरू जी के नाम रूपी जहाज पर चढ़ाने के लिए, गाँव पहुविन्ड, जिला अमृतसर का निवासी भाई भगतू अपनी धर्मपत्नी ज्यूणी तथा सपुत्र दीपे समेत सन् 1700 ई. की बैसाखी से दो-चार दिन पहले श्री आनंदपुर साहिब पहुँच गया। अकालपुरुष की फौज 'खालसा पन्थ' के सृजन दिवस की प्रथम वर्षगांठ के सुअवसर पर श्री आनंदपुर साहिब जी की पावन धरती पर विशाल स्तर पर अमृत संचार का आयोजन किया गया। विशेष रूप से दूर-दूर से आए हजारों श्रद्धालुजनों ने जिज्ञासु रूप होकर अमृतपान किया तथा गुरू जी की इलाही दृष्टि के पात्र बने। भाई भगतू, माता ज्यूणी तथा अट्ठारह वर्षीय नवयुवक 'दीप' को भी इस समय अमृत रूपी बहुमूल्य वस्तु प्राप्त हुई। अमृतपान के उपरान्त 'दीप' का नाम 'दीप सिंह' रखा गया। ईश्वरीय कृपा की दिव्य दृष्टि को प्राप्त यही 'दीप सिंह' सिक्ख इतिहास का सूर्य शहीद बाबा दीप सिंह बनकर, सारे संसार में ध्रुव तारे की भांति चमका।

ऐतिहासिक हवालों के अनुसार बाबा दीप सिंह जी का जन्म 27 जनवरी सन् 1682 ई. का माझा के प्रसिद्ध गाँव पहूविंड में हुआ। युवावस्था में ही अमृतपान करके आप जी गुरू के साथ जुड़ गए। श्री आनन्दपुर साहिब के अलौकिक रंगों ने उनकी रूह को किसी दिव्यानन्द से ओत प्रोत कर दिया। शस्त्रधारी सिंह योद्धाओं की शूरवीरता से भरे हुए दृश्यों ने उनके दिलो दिमाग में जूझने की वृत्ति को जागृत कर दिया। नयुवक दीप सिंह, कलगीधर का हुक्म मानकर तथा माता-पिता से आज्ञा लेकर स्थाई तौर पर श्री आनन्दपुर साहिब जी की प्राथमिक शिक्षा दीक्षा व अस्त्र-शस्त्र का अभ्यास करने लग पड़ा। चार वर्षों की निरन्तर व अथक साधना ने दीप सिंह को इतना विद्वान बना दिया कि बाइस वर्ष की छोटी सी आयु में ही श्री आनन्दपुर साहिब तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्रों के सारे निवासी आपको 'बाबा दीप सिंह जी' कहकर पुकारने लग पड़े।

इस समय के दौरान बाबा दीप सिंह जी घुड़सवारी तथा शस्त्र विद्या में इतने निपुण हो गए कि एक दिन आप सतगुरू जी का संकेत पाकर अकेले ही शेर का शिकार कर लाए। श्री आनंदपुर साहिब में जहाँ बाबा दीप सिंह जी की मोतियों जैसी लिखाई की चर्चा हुआ करती थी, वहीं पर गतके के अखाड़े में, उनके द्वारा लिए गए पैंतड़ों की बातें भी जन साधारण की जुबां पर प्रायः आती ही रहती थीं। अब बाबा दीप सिंह जी गुरू दशमेश जी के चरणों में रहकर कलम व कृपाण के धनी बन चुके थे अर्थात उनके सान्निध्य को पाकर शूरवीरता और विद्वता एक हिन्दू में एक संगम की भांति इकट्ठी हो गई।

पूरे चार वर्षो बाद सन् 1704 ई. की बैसाखी के समय श्री आन्नदपुर साहिब पहुँचे भाई भगतू तथा माता ज्यूणी ने कलगीधर महाराज के पास, बाबा दीप सिंह जी को आन्नद कारजों के लिए अपने गाँव ले जाने के लिए विनय की। गुरू जी का हुक्म मानकर, बाबा दीप सिंह जी, अपने माता पिता के साथ, अपने गाँव पहूविंड पहुँच गए। इधर विवाह की तैयारी के तौर पर बाबा दीप सिंह जी के लिए योग्य कन्या की तलाश की जा रही थी, उधर दिल्ली की फौजों के साथ-साथ बाईधार के पहाड़ी राजागण लाहौर तथा सरहिन्द के सूबेदार संयुक्त रूप से श्री आनन्दपुर साहिब को घेरने की योजनाओं को अन्तिम रूप दे रहे थे। इधर पहूविंड में विवाह की तैयारियाँ सम्पूर्ण हो गई और उधर सतगुरू जी के द्वारा श्री आनन्दपुर साहिब को छोड़ देने की खबर आ गई। आपका

विवाह कार्य अभी सम्पन्न होना ही था कि चारों साहिबजादों और माता गुजरी जी के शहीद होने की खबर माझा के गाँवों में जंगल की आग की भांति फैल गई। बाबा दीप सिंह जी ने श्री आनन्दपुर साहिब में रहते हुए माता गुजरी जी के द्वारा लाडले पुत्रों वाले प्यार को प्राप्त किया था तथा छोटे साहिबजादे को न जाने कितनी बार अपने कन्धों पर बिठा कर खिलाया था। आपने बाबा फतहि सिंह जी को गुरवाणी की मीठी-मीठी लोरियाँ अनेकों बार सुनाई थीं। गतके के अखाड़े में शस्त्रों का अभ्यास करते हुए बाबा अजीत सिंह तथा बाबा जुझार सिंह जी को कई दांव-पेच सिखाए थे। साहिबजादों की शहादत ने बाबा दीप सिंह जी को सांसारिक मोह से पूर्णतः विरक्त कर दिया और उनका मन अत्यन्त व्याकुल हो गया। सतगुरू जी के परिवार पर इतनी बड़ी विपदा पड़ी हुई हो और वह शादी-ब्याह की शहनाइयों को सुने, ऐसा हरगिज नहीं हो सकता था, फलस्वरूप वह क्षेत्रीय नौजवानों के जत्थे को अपने साथ में लेकर मालवे की तरफ को चल पड़ा। जिधर-जिधर से गुरू जी के बारे में खबर मिलती, उस तरफ को आपके जत्थे की दिशा बदलती जाती। साबो की तलवंडी (दमदमा साहिब) पहुँच कर बाबा दीप सिंह जी ने गुरू जी के चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया। सतगुरू जी ने आपको आशीषों से युक्त प्यार भरा थापड़ा दिया।

श्री दमदमा साहिब में विचरण करते समय बाबा दीप सिंह जी को श्री आनन्दपुर साहिब वाले नजारे दिखाई नहीं पड़ते थे। उन्हें न तो साहिबजादों के तेजवान मुख दिखाई पड़ते थे और न ही माता गुजरी जी की ममता भरी नूरानी आशीषें ही प्राप्त हो पाती थीं तथा सबसे अधिक उन्हें तकलीफ व उदासी इस बात की होती थी कि जब सबसे अधिक विपदा वाला समय गुरू जी पर आया तो उस समय वह सतगुरू जी से दूर था। इस प्रकार की एकान्त की घड़ियों में बाबा दीप सिंह जी पाश्चाताप के आँसुओं के द्वारा सतगुरू जी के चरण धो देते थे। इस प्रकार के उदासी के समय में श्री दशमेश जी किसी दिव्यावस्था में से उन्हें सांत्वना देते हुए समझाते कि दीप सिंह! गुरू नानक का घर व्यक्तिगत खुशियों व गमियों से बहुत ऊपर है। हम लोगों का उद्देश्य युद्ध करने का नहीं है, बल्कि मानवता का कल्याण करना है, लेकिन मानवता के कल्याण के संकल्प को लेकर चलते समय समाज विरोधी तत्वों यानि कि लुटेरों व जालिमों के साथ टक्कर का होते रहना स्वाभाविक ही है। इसके लिए ईश्वरीय रजा में राजी रहने के साथ-साथ, इसे भी दिव्यानन्द का ही एक रूप समझते हुए, हरियश गायन करते रहना और सम्पूर्ण मानवता के कल्याणार्थ निरन्तर यत्नशील रहना चाहिए। मानव जीवन का सार, इसकी सहज कार्यशीलता में है।

सन्त सिपाही सतगुरू जी के मुखारविन्द के माध्यम से एक पैगम्बर के शब्द सुनकर बााब जी एक दिव्यानन्द में आ जाते तथा कई-कई घड़ियों तक आपका ध्यान गुरू चरणों के साथ जुड़ जाता। सतगुरू जी की कृपा दृष्टि की बदौलत आप ब्रह्मज्ञान के मालिक बन गए।

श्री दमदमा साहिब रहते हुए, अमन-शान्ति के समय को जानकर, दशमेश पिता जी ने अपनी देख रेख में श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की प्रमाणित बीड़ को तैयार करने का कार्य आरम्भ किया। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी अपने मुखारविन्द से बोल कर गुरवाणी को सुनाते जाते और भाई मनी सिंह जी अपने मुबारक कर-कमलों द्वारा लिखते जाते। प्रत्येक अंग (प्रत्येक पृष्ठ) को साथ ही साथ दुरुस्त करने का कार्य बाबा दीप सिंह जी ने निभाया। इस प्रकार से एक ही समय श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के दो स्वरूप तैयार हो गए। 'सुध कीचै' का कार्य सम्पन्न होने के बाद कलगीधर महाराज जी एक स्वरूप को लेकर दक्षिण दिशा की तरफ रवाना हुए। श्री दमदमा साहिब जी में बैठ कर, बाबा दीप सिंह जी ने इस पावन स्वरूप के चार अन्य उतारे किए। प्रमाण के तौर पर 'पन्थ प्रकाश' का कथन प्रस्तुत है –

नितप्रत गुरू ऊचारी जैसे।
बाणी लिखी मनी सिंघ तैसे।
और चार तिस परतै भाए। दीप सिंघ शहीद लिखाए।

बाबा दीप सिंह जी द्वारा बहुत ही सख्त मेहनत के साथ मोतियों जैसी जड़त वाले तैयार किए गए ये चारों स्वरूप, चारों तख्तों पर यानि कि श्री अकाल तख्त साहिब अमृतसर, तख्त श्री पटना साहिब, तख्त श्री केशगढ़ साहिब – श्री आनन्दपुर साहिब तथा तख्त श्री हुजूर साहिब नांदेड़ साहिब में सुशोभित किए गए। बाबा दीप सिंह जी ने श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की एक और बीड़ फारसी अक्षरों में भी तैयार की।

श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी के द्वारा हुजूर साहिब की तरफ प्रस्थान करते समय तथा भाई मनी सिंह जी के श्री दरबार साहिब – अमृतसर के मुख्य ग्रन्थी नियुक्त होने के बाद श्री दमदमा साहिब वाले प्रचार के सारे काम-काज करने का उत्तरदायित्व तथा वहाँ की जत्थेदारी बाबा दीप सिंह जी ने

सम्भाली। कलगीधर पातशाह के करीब डेढ़ साल के श्री दमदमा साहिब तलवंडी साबो वाले मुकाम ने इस स्थान को सिक्ख धर्म के प्रचार का केन्द्र बना दिया था। बाबा जी की लगन, मेहनत, दृढ़ इरादा व आस्था ने श्री दमदमा साहिब के इस रुतबे को पूरी तरह से कायम रखा तथा सतगुरू जी के पदचिन्हों पर अटूट श्रद्धा तथा दृढ़ विश्वास व आस्था सहित चलते हुए और भी बुलन्दावस्था प्रदान की।

दशमेश पिता जी का हुक्मनामा पाँच तीर तथा सतगुरू जी द्वारा तैयार की गई हिट लिस्ट को लेकर, दक्षिण नांदेड़ से जब बाबा बन्दा सिंह बहादर पंजाब पहुँचे तो बाबा दीप सिंह जी, स्वयं को कुर्बान कर देने वाले जज्बे को रखने वाले शूरवीर योद्धाओं का एक बड़ा जत्था लेकर उन्हें आगे होकर मिले। सढौरा तथा समाना को उसके अन्जाम तक पहुँचाने के बाद बाबा बन्दा सिंह बहादर ने सरहिन्द की तरफ कूच कर दिया। चपड़चिड़ी के मैदान में बहुत ही रक्त रंजित मुकाबिला खालसा तथा सरहिन्द की सेनाओं के बीच में हुआ। जीत की जय-जयकार के बीच मैदान खालसे के हाथ रहा यानि कि जीत खालसे की हुई। बाबा बन्दा सिंह बहादर के नेतृत्व में खालसे ने सरहिन्द की ईंट से ईंट बजा दी। सूबेदार वजीर खाँ तथा दीवान सुच्चानन्द पापी को, उनके कारनामों की उपयुक्त सजी दी गई। 24 मई सन् 1710 ई. को पंजाब की धरती के एक भू-भाग पर खालसे का पहला राज्य स्थापित हुआ यथा -

देग तेग फतहि नुसरत बेदरंग॥
याफत अज नानक गुरू गोबिंद सिंघ॥

खालसा के नाम की मोहर तथा खालसे का सिक्का शुरू किया गया और बाबा बन्दा सिंह बहादर पहला 'सिक्ख महाराजा' बना।

बाबा दीप सिंह चपड़चिड़ी के मैदान में अपनी जान की परवाह किए बिना जिस बहादुरी के साथ लड़े थे, उसे देखते हुए भरे दरबार में बाबा बन्दा सिंह बहादुर ने बाबा दीप सिंह जी को 'जीवित शहीद' का खिताब देकर सम्मानित किया। इस प्रकार 'बाबा' के खिताब के बाद 'शहीद' का सम्मानित खिताब भी आपके सम्मानित नाम के साथ युवावस्था में ही जुड़ गया।

सरहिन्द की इस ऐतिहासिक जीत एक के बाद बाबा बन्दा सिंह बहादुर जी से आज्ञा लेकर शहीद बाबा दीप सिंह जी अपने द्वारा आरम्भ किए गए गुरमति के प्रचार व प्रसार कार्य को और अधिक लामबन्द करने के लिए पुनः श्री दमदमा साहिब, साबो की तलवंडी चले गए। बाबा जी ने दमदमा साहिब को अपना मुख्य स्थान बनाकर बहुत ही विधिपूर्वक व योजनाबद्ध ढंग से सिक्खी की एक प्रचंड लहर खड़ी कर दी। बाबा दीप सिंह जी की सुनियोजित लहर के कारण, श्री दरबार साहिब, तत्कालीन हुकूमत के जुल्म व अत्याचार द्वारा सताए गए सिक्ख परिवारों के लिए एक आश्रय तथा जुझारू सिक्ख योद्धाओं के लिए कठिन परिस्थितियों के समय एक शरण स्थली बन गया।

दूरदृष्टि तथा दिव्यदृष्टि के स्वामी बाबा दीप सिंह जी, धर्म प्रचार के कार्य को इतना अधिक महत्व देते थे कि जब माझे के गाँवों में जुझारू सिक्ख योद्धाओं द्वारा जिन्दगी व मौत की लड़ाई लड़ी जा रही थी, तो उस समय बाबा जी अडोल स्थिति में सिक्खी के प्रचारार्थ यत्नशील थे। यहाँ तक कि बाबा बन्दा सिंह बहादर की शहादत, भाई तारा सिंह तथा भाई मनी सिंह जी की शहादत तथा मस्सा रंघड़ द्वारा की गई, श्री दरबार साहिब अमृतसर की बेअदबी के समय भी उनका मुख्य ध्यान धर्म-प्रचार की तरफ ही था। ऐसा नहीं था कि इन घटनाओं की उन्हें कोई खबर नहीं थी, बल्कि समस्त घटनाओं के बारे में आपको सूक्ष्म जानकारी थी। पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्राप्त ऐतिहासिक स्मृतियों के हवाले तो ये भी कहते हैं कि बीकानेर से मस्सा रंघड़ को उसके अन्जाम तक पहुँचाने के लिए योजनाबद्ध ढंग से चले भाई सुक्खा सिंह तथा भाई महिताब सिंह ने श्री दमदमा साहिब में बाबा दीप सिंह जी के पास ही ठहराव किया था और बाबा दीप सिंह जी ने उनकी कार्यसिद्धि के लिए गुरू जी के चरणों में अरदास की थी।

सन् 1711 ई. से 1757 ई. तक करीब साढ़े चार दशकों का समय, जब हुकूमत द्वारा सिक्खों के सिरों की कीमतें रखी गई थीं, जब सिक्ख महिलाओं द्वारा सवा-सवा मन अनाज पिसाए गए थे, जब अबोध बच्चों के टुकड़े कर करके व उनके हार बना-बनाकर उन्हीं की माताओं के गले में डाले गए थे, बाबा जी पूरी तरह से धर्म प्रचार व अमृत संचार कार्य को समर्पित रहे थे। यदि उस समय के जुझारू सिक्ख योद्धाओं की वृत्ति भी आजकल के सिक्खों जैसी ही होती तो शायद बाबा जी को उनके कोपभाजन का शिकार होना पड़ता लेकिन तत्कालीन सिक्ख योद्धा इस बात को भली भांति जानते थे कि यदि 'मन्नू' के द्वारा सिक्खों का कत्लेआम किए जाने के बाद भी वे दुगने चौगुने होते जा रहे हैं, तो उसके पीछे सिक्खी के प्रचार की योजना ही कार्य कर रही

है। इसी समय के दौरान, छोटे घल्लूघारा के बाद सन् 1748 ई. में बैसाखी के अवसर पर पन्थ खालसा के जत्थों को मिसलों का रूप दिया गया तथा सरबत खालसा के गुरुमते के अनुसार बाबा जी की सेवा व साधना को देखते हुए उनके शहीदी जत्थे को श्री अकाल तख्त साहिब से स्वीकृति देकर शहीद मिसल का नाम दिया गया।

सन् 1756 ई. के नवम्बर मे दिल्ली के तख्त पर आसीन मुगल बेगम के निमन्त्रण पर अहमदशाह अब्दाली ने हिन्दोस्तान पर चौथा हमला किया। बिगड़ैल सांढ़ की भांति लाहौर तथा सरहिन्द को लताड़ता हुआ वह दिल्ली पहुँच गया तथा विजयी जरनैल के रूप में 28 जनवरी सन् 1757 ई. को लाल किले में दाखिल हो गया। इस समय अब्दाली के सिपाहियों ने दिल्ली के रजवाड़ों, नवाबों तथा अमीरों के घरों में कोई भी सुन्दर व कीमत वस्तु रहने नहीं दी। अब्दाली के सेनापति जहान खान ने विशेष रूप से मथुरा के मन्दिरों को लूटा। लूट के माल को काबुल की तरफ ढोने के लिए उसने 28,000 बैलों तथा 80,000 घोड़ों का प्रयोग किया। पंजाब में से वापिस लौटते समय खालसे ने अब्दाली के वजन को कुछ हल्का करने के लिए उस पर गुरिल्ला आक्रमण करने शुरू कर दिए। दिल्ली को पैर का अंगूठा चुसवा कर आया यानि कि अहंकार से ओतप्रोत अब्दाली, सिक्खों के हमलों के कारण पूरी तरह से लाचार सा हो गया तथा बुरी तरह से बौखला गया। उसने अपने पुत्र तैमूर शाह को पंजाब का सूबेदार नियुक्त करके तथा जहानखान को उसका सेनापति बनाकर सिक्खों का नामोनिशान मिटा देने का हुक्म दे दिया।

सैनापति जहान खान तथा जालन्धर के फौजदार नासिर अली ने पहले ही हमले में गुरुद्वारा थम्म साहिब करतारपुर को जलाकर राख कर डाला, सोढ़ी बड़भाग सिंह, तुर्क फौजों को चकमा देकर, शिवालिक की पहाड़ियों की तरफ हिरन हो गया। इसके बाद तुर्कों के टिड्डी दल ने श्री दरबार साहिब अमृतसर पर हल्ला बोल दिया और जहान खान ने सच्चखण्ड श्री हरिमन्दिर साहिब को पूरी तरह से जमींदोज कर दिया। चहुँओर के मकानों का गिरा कर अमृत सरोवर को मिट्टी से भर दिया। अमृतसर में सख्त फौजी पहरे को बिठाकर सेनापति जहानखान स्वयं लाहौर लौट गया।

बाबा दीप सिंह जी की शारीरिक आयु इस समय पचहत्तर वर्ष की थी। 45 वर्षों की अथक साधना के द्वारा आपने सिक्खी के प्रचार का प्रबन्ध पक्के तौर पर कर दिया था। उनके द्वारा ही दमदमा साहिब से शुरू की गई प्रचार व प्रसार की यह परम्परा, टकसाली रूप में अब पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलने के समर्थ हो चुकी थी, फलस्वरूप अब सही अर्थों में सिर को हथेली पर रखकर युद्ध के मैदान में दो-दो हाथ करने का समय आ चुका था। अब परिस्थितियाँ भी इस प्रकार की उत्पन्न हो चुकी थीं कि परमात्मा के द्वार पर शीश को अर्पित कर देने का समय आ चुका था। सच्चखण्ड श्री हरिमन्दिर साहिब जी की स्वतन्त्रता के लिए बाबा जी के प्रण को 'पन्थ प्रकाश' में इस प्रकार से अंकित किया गया है -

सीस सुधासर हेत कर, देवेंगे हम जाइ।
कर अरदास टुर पए, सिंघ जी फतहि गजाइ।

बाबा दीप सिंह जी की ललकार व अपील को सुनकर शहीदियों की खुमारियों का चाव चहुँओर फैल चुका था। श्री दमदमा साहिब जी से करीब पाँच सौ सिंहों के शहीदी जत्थे के साथ बाबा जी ने श्री अमृतसर की तरफ कूच कर दिया। हरी के पत्तन तक पहुँचते-पहुँचते शूरवीर शहीदी सिंहों (सिक्खों) की संख्या पाँच हजार तक पहुँच चुकी थी। तरन-तारन तक पहुँचते-पहुँचते और भी बेशुमार शूरवीर योद्धागण शहादत के चाव में उनकी अगुवाई में लामबन्द हो गए।

शहीदी जत्थे के आगमन की खबर प्राप्त होने पर अहमदशाह अब्दाली के मुख्य सेनापति जहान खान ने बीस हजार फौज के साथ लाहौर से अमृतसर की तरफ कूच कर दिया और माझा व दोआबा में प्रवेश कर चुके अपने सारे फौजदारों को तुरन्त श्री अमृतसर की तरफ मुड़ने के सन्देश भेज दिए।

श्री अमृतसर साहिब से लगभग पाँच मील की दूरी पर बाबा दीप सिंह जी के शहीदी जत्थे का मुकाबिला, अब्दाली के सेनापति जहान खान हाजी अतई खान, जरनैल याकूब खान तथा जरनैल अमान खान के साथ हो गया। दोतरफा लड़ाई में जब याकूब खान, बाबा दीप सिंह जी के हाथों मारा गया तो अमान खान इस दोतरफा लड़ाई के लिए आगे आ गया। बहुत ही कांटे का मुकाबिला दोनों के बीच हुआ। दोनों तरफ से बराबर की फुर्ती से हथियार चल रहे थे, अपने-अपने पैंतरे से लड़ाई चल रही थी और दोनों तरफ से रणनीति के मुताबिक दांव-पेच खेले जा रहे थे। बाबा दीप सिंह जी तथा जरनैल अमान खान की बराबरी वाली टक्कर का जिक्र करते हुए ज्ञानी-ज्ञान सिंह जी 'पंथ प्रकाश' में लिखते हैं कि-

चली तेग अति बेग सैं, दोहू केर बल धार।
ऊतर गए सिर दोहाँ के, परसपरे इक सार।

अभी बाबा जी के कदम लड़खड़ाए ही थे कि 'पंथ

प्रकाश' की गवाही के अनुसार एक सिक्ख ने कहा -

प्रण तुमहारा दीप सिंघ रहयो।

इन आवाजों को सुनते ही बाबा जी का शरीर संभल गया और उनका सिर, हथेली पर टिक गया। पंथ प्रकाश का कथन है -

सुण सिंघ जी निज प्राण संभारा।
निज सिर बाम-हाथ निज धारा।
दहिने हाथ तेग खर धारा।
वजन जाहि था सेर अठारा।
लरत कबंध तुरक गन संगै।
ओर सुधासर चलिऔं निसंगै।
गरजत तरजत तन घन नयाई।
तुरक चले भग डरि अगवाई।

इस रूप में लड़ते-भिड़ते शहीद बाबा दीप सिंह जी, सच्चखण्ड श्री हरिमन्दिर साहिब जी की परिक्रमा में पहुँच गए। परिक्रमा में जहाँ पर आपने अपने शरीर का परित्याग किया था, वहाँ पर उनकी याद में समाधि स्थान सुशोभित है।

शहीद बाबा दीप सिंह जी की अद्वितीय शहादत के बारे में सुनकर, खालसा पन्थ के योद्धाओं के जत्थे तीव्र गति से आगे बढ़ते हुए अमृतसर पहुँच गए, फलस्वरूप श्री अमृतसर जी की धरती पर एक बहुत बड़ा समूह एकत्र हो गया और सबने एक स्वर में बाबा जी के द्वारा की गई पन्थ की सेवा को 'धन्य-धन्य' कहते हुए सारे पंजाब को खालसा पन्थ की 'रक्षा' में लेने का ऐलान कर दिया। 'पन्थ प्रकाश' का वर्णन है -

इह सुन पंथ खालसा आयो।
दिश चारन तै कठ बड बायो।
दीप सिंघ की गाथा सुन सुन।
धंनय धंनय सभ कैहें पुन पुन।

बाबा जी की अद्वितीय शहादत को नमस्कार करने के लिए खालसा पन्थ के द्वारा गुरुद्वारा रामसर के नजदीक चाटीविंड के गेट वाली तरफ 'यादगारी शहीदी स्थान' का निर्माण किया गया है।

शहीद बाबा दीप सिंह जी की महान शहादत के कारण उत्पन्न हुए रोष तथा विद्रोह में से निकली हुई लोक जागृति ने खालसई मिसलों के रूप में तुर्कों या मुगलों को वाजिब जवाब देते हुए 'हन्नै हन्नैमीरी' की दौर की शुरूआत की तथा खालसा पन्थ की बुलन्दावस्था में शान स्थापित हो गई।

धन्य बाबा दीप सिंह जी ने अपने हाथों से ही अपनी कलाई पर बाँधी हुई शहीदी गानी के द्वारा सिरों के बलिदान देने वाली कौम के सिर पर राजकीय शान व आन का प्रतीक ताज टिका दिया। शहीद बाबा दीप सिंह जी की इस अद्वितीय देन तथा लासानी कुर्बानी को सारा खालसा पन्थ सिजदा करता है।

शहीद बाबा दीप सिंह जी का सारा जीवन तथा अद्वितीय शहादत गुरमति के प्रचार तथा प्रसार को समर्पित है। उन्होंने तलवार के युग में कलम की महत्ता को जिस प्रकार से महसूस किया और कृपाण के साथ-साथ जैसे कलम का प्रयोग किया वह आज के समय में भी हमारा मार्ग दर्शन करता है।

कलम हुए सिर को हथेली पर टिकाने की सामर्थ्य रखने वाली कौम, यदि कलम की करामात को अपने कौमी जीवन का हिस्सा बना ले तो फिर कौम का भविष्य सूर्य की भांति रौशन हो जाएगी। शहीद बाबा दीप सिंह जी के जीवन के द्वारा प्राप्त इस बहुमूल्य मार्ग दर्शन को आज की पन्थ चेतना का हिस्सा बनाने के लिए यत्नशील होना, प्रत्येक जागरूक सिक्ख का दायित्व है।

(पृष्ठ 37 का शेष)

सो जनु = वे गुरमुखजन संसार के अन्दर अन्य लोगों से पृथक ही दिखाई पड़ते हैं, जिसु अंतरि = जिनके अन्दर विवेक बुद्धि अर्थात सत्य व असत्य की विचार विद्यमान है अथवा जिनेक अन्दर (विव+एक) विव = दो यानि कि जीव व ईश की ऐक = एकता वाला स्वरूप तथा परोक्ष ज्ञान का विचार है।

सो सेवकु हरि आखीऔ
जो हरि राखै ऊरि धारि॥

सो = वह ही हरि = अकालपुरुष का सेवकु = दास आखीऔ कहलवाने का अधिकारी है अथवा प्रभु-प्रेमी कहलवाने का अधिकारी है जो कि प्रभु जी को अपने उर = हृदय में धारि = धारण करके राखै = रखता है।

मनु तनु सऊपे आगै धरे हऊमै विचहु मारि॥

जो गुरुमुखजन मन तथा तन उस प्रभु जी को सउपै = सौंप दो और अपने तन को भी सतगुरू जी या परमात्मा जी की सेवा में उपस्थित रखे तथा अपने विचुहु = अन्दर से हउमै = अहंभाव को मारि = समाप्त करके रखे भावार्थ अहंकार का सम्पूर्ण त्याग कर दे।

धनु गुरमुखि सो परवाणु है जि कदे न आवै हारि॥

वे गुरमुखजन धनु = धन्यता के योग्य हैं तथा परमात्मा के द्वार पर परवाणु = स्वीकार्य हैं जि = जिन्होंने काम, क्रोधादि विषय विकारों में मनुष्य जन्म को हारा नहीं है अर्थात इस प्रकार के गुरुमुखजन मनुष्य जीवन को सफल कर जाते हैं।

करमि मिलै ता पाईऐ
विणु करमै पाइआ न जाइ॥

यदि कर्म अच्छे हों तभी सतगुरू जी की संगत प्राप्त हुआ करती है और तभी उनके द्वारा नाम की दात पाइऐ = प्राप्त हो पाया करती है। निष्काम कर्मों के बिना अथवा सतगुरू जी की कृपा के बिना प्रभु जी के नाम के दिव्य रस या दिव्यानन्द को प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

लख चउरासीह तरसदे
जिसु मेले सो मिलै हरि आइ॥

हे बन्धु! भले ही चौरासी लाख योनियों के सारे ही जीव प्रभु-प्राप्ति के लिए सदैव तरसदे = लालायित रहते हैं लेकिन जिनको सतगुरू जी अपनी कृपादृष्टि द्वारा मिलाना चाहते हैं वे ही संसार में आइ = आकर प्रभु जी को मिलै = मिल पाते हैं भावार्थ मनुष्य जन्म को धारण करके वे ही प्रभु जी से मिल पाते हैं, जिनके ऊपर सतगुरू जी की कृपादृष्टि होती है।

नानक गुरमुखि हरि पाइआ
सदा हरि नामि समाइ॥

सतगुरू जी फुरमान करते हैं कि जिन गुरुमुखजनों ने परमात्मा का नाम जपकर उसे पाइआ = प्राप्त कर लिया है वे सदा = हमेशा के लिए हरि नामि = परमात्मा के नाम में मिल जाते हैं अथवा अभेद हो जाते हैं।

'चलता'

(पृष्ठ 35 का शेष)

फलस्वरूप हमारी यह जीवन यात्रा बहुत ही खुशियों से भरपूर हो जाएगी। यदि हम आन्तरिक तौर पर उस आनन्द में चले गए तो फिर -

घरि सुखि वसिआ बाहरि सुखु पाइआ ॥
कहु नानक गुरि मंत्रु दिड़ाइआ ॥ अंग - 1136

जब हम इस गुरमन्त्र को दृढ़ कर लेंगे और विश्वास में आ जाएँगे तो फिर हमारे समस्त दुख समाप्त हो जाएंगे। फिर यदि कोई दुख हमारे पास आएगा भी तो वह औषधि के तौर पर आएगा यानि कि वह नाम के साथ हमारी घनिष्ठता को अधिक सघन करेगा। अतः आओ! हम लोग इस प्रकार से अपनी जीवन यात्रा पर आगे बढ़ते जाएँ। इससे आगे का कार्य फिर सतगुरू जी का है। वह जहाँ हमें पहुँचाना चाहता है, वहाँ हम पहुँच जाएंगे क्योंकि यदि हमारे अन्तिम श्वास पर गुरू का मन्त्र होगा -

अंति कालि नाराइणु सिमरै
ऐसी चिंता महि जे मरै ॥
बदति तिलोचनु ते नर मुकता
पीतंबरू वा के रिदै बसै ॥ अंग - 526

तो फिर हम स्वतः ही गुरू लोक में पहुँच जाएंगे। अतः इस युक्ति को अवश्य ही अपनाओ, इसका अभ्यास करो, उन्नति करो। अतः इतनी विनतियों को आप सब स्वीकार करें, धन्यवाद।

वाहिगुरू जी का खालसा, वाहिगुरू जी की फतहि।

(पृष्ठ 39 का शेष)

में रंगे हुए राए बुलार जी ने निर्णय किया कि यहाँ पर तो मेरा कुछ भी नहीं है बल्कि यह सारी कृपा तो गुरू जी की ही है। मेरा तो शरीर भी मेरा नहीं है, फिर यह तलवंडी मेरी कैसे हो गई? और फिर इस तलवंडी का तो कण-कण गुरू जी के चरण स्पर्श के द्वारा पावन हो चुका है। यथा -

जिथै जाइ बहै मेरा सतिगुरू सो थानु सुहावा राम राजे॥ अंग - 450

यह तलवंडी आज तक तो मेरे बुजुर्गों या पितरों के कारण प्रसिद्ध थी लेकिन आज के बाद यह गुरू नानक के टिकाने के तौर पर प्रसिद्ध होगा। राए बुलार जी के पास उस समय 1700 बीघे जमीन थी। उन्होंने उसी समय अपनी आधी जमीन सतगुरू नानक देव जी के नाम करवा दी, आज भी 850 बीघे जमीन माल विभाग में गुरू नानक के नाम पर बोलती है। राए बुलार ने कहा कि आज के बाद इसका नाम राए भोइ की तलवंडी नहीं होगा अपितु इसका नाम ननकाना साहिब होगा। आज भी माल विभाग के रिकार्ड में 850 बीघे जमीन गुरू नानक के नाम पर है, ऐसा इतिहासकारों का कथन है।

यह है एक नूरानी मिलाप का प्रताप, श्रद्धा, प्यार और वैराग्य की मूर्ति राए बुलार जी।

बारां भाई गुरदास
स्टीक

डा. भाई वीर सिंह जी

6. पउड़ी (तथाच)

त्रेते छत्री रूप धरि सूरज बंसी वडि अवतारा।
नऊ हिसे गई आरजा माइआ मोहु अहंकारू पसारा।

अर्थ - त्रेता युग में क्षत्रिय वर्ण में श्री रामचन्द्र जी का रूप धारण करके सूर्यवंशी बहुत बड़े राजे का अवतार हुआ। अब लोगों की आयु नौवां भाग ही रह गई (भावार्थ लाख में से 90 हजार कम होकर केवल दस हजार ही रह गई) और माया-मोह व अहंकार का विस्तार चहुँओर हो गया (ऐसा हिन्दू लोग मानते हैं)।

दुआपरि जादव वेस करि जुगि जुगि अऊध घटै आचारा।
रिग बेद महि ब्रहम किति पूरब मुखि सुभ करम बिचारा।

द्वापर युग में यदू नाम के राजा के घर कृष्ण नाम वाले ने वेश धारण किया। युगों-युगों में आयु तथा आचार-व्यवहार कम होते चले गए। (अब आयु नौ भाग और भी कम हो गई यानि कि अब आयु दस हजार से कम होकर केवल एक हजार वर्ष ही रह गई) ऋगुवेद में से ब्राह्मण कर्म करवाते थे और वे पूरब दिशा की तरफ मुँह करके शुभ कर्म या यज्ञ करवाते थे। (वे पूरब दिशा की तरफ हरि जी का निवास मानते हैं, यहाँ पर भाई गुरदास जी प्रचलित मतों के निश्चयों के बारे में बतलाते हैं।)

खत्री थापे जुजरू वेदि दखण मुखि बहु दानु दातारा।
वैसों थापिआ सिआम वेदु पछम मुखि करि सीसु निवारा।

द्वापर युग में क्षत्रियों ने यजुर्वेद को अपने सामने रख लिया और दक्षिण दिशा की तरफ मुँह करके अधिकांश दान आदि कर्म करने लग पड़े (अर्थात वे दक्षिण देश में हरि जी का निवास मानने लग पड़े) यथा - गुरवा-कोऊ पछाह को सीस निवाइओ यहाँ पर मतों की मान्यताओं के बारे में बतलाते हैं।

रिगि नीलंबरि जुजर पीत स्वेतंबरि करि सिआम सुधारा।
त्रिहु जुगी त्रै धरम ऊचारा।

ऋगुवेद में नीले वस्त्र, युजर्वेद में पीले वस्त्र तथा सामवेद में सफेद वस्त्र धारण करके पाठ आदि कर्म करते थे। भावार्थ राम व कृष्ण तथा हंसावतार के उपासक होकर अपने कर्म करते थे। तीनों युगों के तीन धर्म उच्चारण करते थे।

भावार्थ - ईश्वर, देश, काल व वस्तु के भेद से रहित है तथा सारे एक स्वरूप होकर आकाश की भांति पूर्ण है। कोई पश्चिम तथा कोई दक्षिण दिशा की तरफ हरि जी को बैठा हुआ मान कर नमस्कारें करते थे, जिसका वर्णन पहले गुरू जी ने 'आसा दी वार' में अच्छी तरह से किया है जैसे कि साम कहै सेतंबर सुआमी सच महि आछे साच रहे अथवा रिग कहै रहिआ भरपूर।। राम नाम देवा महि सूर।। अर्थात सत्युग में सामवेद पढ़ते थे और हंसावतार के उपासक थे, त्रेता युग में ऋगुवेद था तथा वे रामचन्द्र जी को युग का अवतार मानते थे अर्थात इस प्रकार के मत फैल रहे थे।

7. पउड़ी (तथाच)

कलिजुग चउथा थापिआ सूद्र बिरति जग महि वरताई।
करम सु रिगि जुजर सिआम के करे जगतु रिदि बहु सुकचाई।

कल्युग चौथा युग बनाया और शूद्रों की वृत्ति सारे संसार में फैल गई (अर्थात लोगों के स्वभाव शूद्रों के सदृश्य हो

गए) ऋगुवेद, यजुरवेद तथा सामवेद के द्वारा कहे गए कर्म बहुत संकोच के साथ करने लग पड़े भावार्थ उनसे दूर होने लग पड़े।

माइआ मोही मेदनी कलि कलि वाली सभि भरमाई।
ऊठी गिलानि जगत विचि हउमै अंदरि जलै लुकाई।

कल्युग वाली माया ने अब सारी सृष्टि को क्लह-क्लेश में भ्रमों के अन्दर डाल दिया। अब संसार में चहुँओर ग्लानि का वातावरण फैल गया और लोग हउमै के अन्दर सड़ने लग पड़े। अगली चार पंक्तियों में आप चौथे युग का रूप कथन करते हैं -

कोइ न किसै पूजदा ऊच नीच सभि गति बिसराई।
भए बिअदली पातसाह कलि काती ऊमराइ कसाई।
रहिआ तपावसु त्रिहु जुगी चऊथे जुगि जो देइ सु पाई।
करम भ्रिसटि सभि भई लोकाई।

अब यानि कि कल्युग के समय में कोई भी किसी दूसरे की बात को मानता ही नहीं है, वे ऊंच व नीच की तरह सब कुछ भूल चुके हैं, जैसे कि दसवें गुरू जी कथन करते हैं 'घर घर होइ बहैंगे रामा'। अब सारे शासक अन्याय करने वाले और प्रजा के ऊपर अपनी कैंची चलाने वाले हो गए। अब वे तो प्रजा को बकरी की भांति काटने लग पड़े अर्थात अब पहले के तीनों धर्मों के सारे कर्म-धर्म समाप्त हो गए। अब इस चौथे युग में परोपकार आदि शुभ गुण समाप्त ही हो गए और सारा जगत कर्म-भ्रष्ट हो गया तात्पर्य यह है कि अब सारा संसार शुभ कर्मों से पतित हो गया। समय के विभाजन का उल्लेख उस समय के मत इस प्रकार से बतलाते हैं।

8. पउड़ी (खट शासत्र)

चहु बेदा के धरम मथि खट सासत्र मथि रिखि सुणावै।
ब्रहमादिक सनकादिका जिऊ तिह कहा तिवै जगु गावै।
गावनि पड़नि बिचारि बहु कोटि मधे विरला गति पावै।
ईह अचरजु मन आवदी पड़ति गुणति कछु भेदु न पावै।

अर्थ - चारों वेदों के धर्मों को विचार का तथा छः शास्त्रों की व्याख्या व्यास आदि छः ऋषि सुनाते हैं। ब्रह्मा तथा उनके पुत्रों सनक, सनन्दन, सनातन, सनत कुमार ने जिस प्रकार से कह दिया है, उसी प्रकार सारा संसार गाता है। अब गाते, पढ़ते और उसकी विचार तो बहुत लोग करते हैं लेकिन परमात्मा के असली भेद को करोड़ों में से कोई एकाध ही जान पाता है। यह बहुत ही आश्चर्यजनक तथा हास्यास्पद स्थिति बनी हुई है कि इतना पढ़ने और विचारने के बाद भी कुछ समझ में नहीं आ पाता है।

यहाँ पर अब तत्कालीन प्रचलित विश्वास छः शास्त्रों को किस प्रकार से मानते व उनके बारे में सोचते थे, कथन किए गए हैं। अगली चार पंक्तियों में आप मतों के भेदों के बारे में कथन करते हैं -

जुग जुग इको वरन है कलिजुग किऊं बहुते दिखलावै।
जंद्रे वजे त्रिहु जुगी कथि पड़ि रहै भरम नहि जावै।
जिऊ करि कथिआ चारि बेदि खटि सासत्रि संगि साख सुणावै।
आपो आपणे मत सभि गावै।

चारों युगों में परमात्मा का एक ही रूप है लेकिन कल्युग में लोग इतना अधिक कथन क्यों करते हैं? दरअस्ल तीनों युगों में तो ज्ञान को ताले ही लगे रहे जबकि लोग कह-कह कर यानि कि व्याख्यान कर करके और पढ़-पढ़ कर थक गए लेकिन भ्रम समाप्त ही नहीं हो सका। जिस प्रकार से चारों वेदों में वर्णन किया है और छः शास्त्रों के साथ-साथ सांख वाले

(शेष पृष्ठ 49 पर)

भाई नन्द लाल जी
गजलें

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जनवरी, पृष्ठ - 49)

13

दी आखिर तालिबि मौला रहि मौला ग्रिफत
हासलि ऊमरि गिरामी रा अर्जी दुनिआ ग्रिफत।

तुमने आखिर में यह देख ही लिया है कि जिस परमात्मा के खोजी ने उस परमात्मा के सही मार्ग को पकड़ लिया है उसने फिर इस बेशकीमती आयु का लाभ प्राप्त कर ही लिया है।

हीच कस बीरूं न बाशद अज सवादि जुलफि तू
ईं दिलि दीवाना-अम आखिर हमी सौदा ग्रिफत।

कोई भी व्यक्ति तुम्हारी जुल्फ के ओरे से बाहर नहीं है और मेरे भी दीवाने दिल को यही पागलपन हो गया है।

गैरि आँ सरवि रवाँ हरगिज निआइद दर नजर
ताँ क्दि राअनाइ ऊ दर दीदाइ-मा जा-ग्रिफत।

जबसे उसके सुन्दर शरीर ने हमारी आँखों में अपनी जगह बनाई है, तब से चलते फिरते उसके सिवाए हमारी निगाहों में दूसरा कोई है ही नहीं।

अज निदाए नाकाइ लैला दिल शोरीदा अम।
हमचू मजनूं मसत गशतो रहि सूइ सहरा ग्रिफत।

लैला की ऊँटनी के गले में पड़ी हुई घंटी की आवाज को सुनकर मेरा दिल दीवाना हो गया है और वह जंगल या निर्जन स्थान को भूलकर मजनू की भांति मस्त हो गया है।

खुश नमी आइद मरा गाह बगैर अज यादि ह्क
ता हदीसि इशकि ऊ अंदर दिलम मावा ग्रिफत।

जब से उसकी प्रेम कहानी मेरे दिल में आकर टिक गई है, तब से मुझे उसकी सच्ची याद के बिना अन्य कुछ भी अच्छा नहीं लगता है -

ता बिआइ यक नफस बहिरि निसारि खिदमतत
चशमि गौहर बारि मा खुश लूलूए लाला ग्रिफत।

हमारी मोती बरसाने वाली आँख ने पोस्त के फूल जैसे आबदार मोती रख लिए हैं ताकि जब तुम एक क्षण के लिए भी मेरे पास आओ तो मैं उन्हें तुम्हारे सिर पर से वार कर फेंक सकूँ।

मी बर-आइद जानि मन इमरूज अज राहि दो चशम
नौबति दीवारि ऊ ता वाअदादि फरदा ग्रिफत।

आज मेरी जान दोनों आँखों के माध्यम बाहर की तरफ को आ रही है लेकिन उसके दीदार की बात तो कयामत के दिन पर जा पड़ी है।

गैरि हमदि ह्क निआइद बर जबानम हीच गाह
हासलि ईं ऊमर रा आखर दिलि गोया ग्रिफत।

मेरी जिह्वा पर परमात्मा की स्तुति के बिना कभी कोई दूसरी चीज आती ही नहीं है। आखिर गोया के दिल ने इस उम्र का सारा लाभ प्राप्त कर लिया है -

दिलि मन दर फिराकि यार बिसोखत
जानि मन बहिरिआँ निगार बिसखत।

मेरा दिल उस सज्जन की विरह व्यथा में सड़ गया है। मेरी जान उस सुन्दर के लिए सड़ मरी है।

आँ चुनाँ सोखतम अजाँ आतिश
हर कि बिशुनीद चूं चनार बसोखत।

उस आग के द्वारा मैं ऐसा जल गया हूँ कि जिस किसी ने भी मेरी इस दशा के बारे में सुना वह भी चनार की भांति जल गया।

मन न तनहा बिसोखतम अज इशक
होमा आलम अर्जी शरार बिसोखत।

मैं अकेला ही प्रेम की अग्नि में नहीं जला अपितु सारा जहाँ ही इस चिंगारी के द्वारा जला हुआ है।

सोखतन दर फिराकि आतिशि यार
हम चुंनीं कीमीआ बकार बसोखत।

सज्जन के विरह की आग में जलना, कीमिया की भांति

किसी सफल प्रयोजन हेतु जलना है।

आफरीं बाद बर दिलि गोया
कि ब-ऊमीद रूइ यार बिसोखत।

गोया के दिल को बहुत शाबाशी है जो कि सज्जन के मुख की आशा में ही जल गया।

15.

अज दे चशमि मसतो शैदा अलगिआस
अज लबो दहनि शकरखा अल-गिआस।

उसकी दो मस्ती भरे व पागल बना देने वाले नयनों से कोई बचाए। उसके मिश्री चबाने वाले मुँह व होंठो से कोई बचाए।

वाए बर नफसे कि बेहूदा गुजशत
अलगिआस अज गफलति मा अलगिआस।

मुझे अफसोस है उस क्षण व पल का जो व्यर्थ चला गया, अफसोस है हमारी लापरवाही व हमारी गफलत पर।

अज निजाइ कुफरो दीं दिल बरहम असत,
बर दरि दरगाहि मौला अलगिआस।

कुफर तथा दीन के झगड़े से दिल परेशान है परमात्मा की दरगाह के दरवाजे पर कोई बचाए।

लूलीआनि शोखि आलम दर रबूद
मी कुनम अज दसति आँहा अलगिआस।

शोख तथा गुस्ताख माशूकों ने सारे संसार को लूट लिया है मैं उनके लिए ही दुहाई दे रहा हूँ कि कोई बचाए।

16.

मसत रा बा-जामि रंगीं इहतिआज
तिशना रा ब-आबि सीरीं इहतिआज।

एक मस्त व्यक्ति को तो लाल रंग के जाम से मतलब है और एक प्यासे को ठंडे व मीठे जल की जरूरत है।

सुहबति मरदानि-ह्क बस अनवर असत
तालिबाँ रा हसत चर्दी इहतिआज।

परमात्मा के भक्तों की संगत तो दिव्य नूर के साथ भरी पड़ी है। उसकी खोज करने वालों को तो बस इसी की आवश्यकता है।

अज तब्सुम करदाई गुलशन जहाँ
हर कि दीदश कै ब-गुलचीं इहतिआज।

तुमने अपनी मुस्कान के द्वारा सारे जहाँ को बाग बना दिया है, जिसने उसे देख लिया है, उसे माली की क्या जरूरत है?

यक निगाहि लुतफि तू दिल मी-बुरद
बाज मी-दारम अजाँ ईं इहतिहाज।

तुम्हारी एक मोहब्ब्त भरी निगाह, मेरे दिल को लेकर उड़ जाती है लेकिन फिर भी मुझे उसी की जरूरत है।

नीसत गोया गरि तू दर दे जहाँ
बा तू दारम अज दिलो दीं इहतिआज।

गोया! तुम्हारे बिना मेरा दोनों संसारों के अन्दर अन्य कोई नहीं है। मुझे तो दिल और दीन की जरूरत केवल तुम्हारे लिए ही है।

17.

अै जुलफि अंबरीनि तू गोया नकाबि सुबहा
पिनहाँ चू जेर अबरि सिआह आफताबि सुबहा।

तुम्हारी यह आसमान जैसी काली जुल्फ मानो प्रातःकालीन बुर्का है जैसे कि कहीं सुबह का सूर्य काले बादलों के नीचे छिप गया हो।

बीरूं बर-आमद आँ महि मन चूं ज जबि सुबहा
सद ताअना मी-जनद ब रूखि आफताबि सुबहा।

जब मेरा चाँद सुबह की नींद से उठकर बाहर आया तो मानो सुबह के सूर्य के मुख को उसने सौ लाहनतें दी हों।

(पृष्ठ 47 का शेष)

भी सुनाते हैं इसी प्रकार से सभी अपने अपने मतों के अनसार गायन करते रहते हैं।

भावार्थ - वेदों, शास्त्रों में मतों-मतान्तरों के बहुत अधिक शोरगुल पड़े हुए हैं, इसलिए तीनों युगों में ज्ञान को तो ताले ही लगे रहे और भेद का खजाना बन्द ही पड़ा रहा।

भाई साहिब जी अन्तिम पंक्ति में अपनी टूक देते हैं कि विभिन्न प्रकार के मत अपने-अपने निश्चयों व मान्यताओं को बतला कर सच्चे होने के दावे करते रहे लेकिन वास्तव में तो यह सबका अपने-अपने अहंभाव का ही प्रकटीकरण है और पक्षरहित कोई भी नहीं है। इस टूक से यह स्पष्ट है कि यहाँ पर भाई साहिब जी तत्कालीन प्रचलित मतों के ख्यालों को कथन कर रहे हैं और वे यहाँ पर अपना उद्देश्य कथन नहीं कर रहे हैं।

गुरु नानक आगमन

(श्री गुरु नानक चमत्कार)

पद्‌म भूषण डा. भाई वीर सिंह जी

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जनवरी, पृष्ठ - 52)

दृष्टि

एक रमणीक नगर के सुन्दर महल के अन्दर एक शाह तथा एक नौकर बातें कर रहे हैं।

अधरका - स्वामी जी! आपकी सेवा में मेरी उम्र का एक बहुत बड़ा भाग व्यतीत हो चुका है। हीरे, लाल, पन्ने, फरोजे, नीलम, पुखराज, सलनिए, गोमेध गुल्लियाँ नए रत्न तथा चौरासी संग आप जी पास हैं। आप रोज उन्हें खोलते, बेचते व खरीदते हो तथा उनके डिब्बों को मैं बाँधता व सम्भालता हूँ लेकिन मुझे इनके बारे में कोई भी समझ नहीं आ पाती है कि मैं इन्हें खरे या खोटे परख लिया करूँ। न रंग, न नीर, न जाति, न इनकी चमक मेरी समझ में ही आती है। वैसे मैं नित्य प्रतिदिन सारी बातें सुनता रहता हूँ।

सालसराए - यह एक दृष्टि है यह कोई लेखे या हिसाब-किताब की बात नहीं है अथवा किसी को पहाड़े पढ़ा कर या जोड़-घटाओ सिखा देना है। देखते रहा करो, देखते रहा करो, देखते रहा करो, कभी कोई ऐसा क्षण भी आ जाएगा, जब तुम्हारी नजर टिक जाएगी और फिर रत्न, संग, कच्च या बलौर की परख तुम्हारे अन्दर से ही आ जाएगी। फिर तुम परखा भी करोगे मुस्कराया भी करोगे।

अधरका - लेकिन स्वामी जी! जिस प्रकार से विद्याओं को शिक्षक पढ़ाते हैं, क्या इस, विद्या को उस विधि से नहीं सीखा जा सकता है?

सालसराए - सब कुछ है और तुम्हें प्राप्त है। अन्य विद्याओं की युक्ति बाहर से परख करने की है, उनके परिणाम निकालने की है। खटास में कुछ डाला यदि सूँ-सूँ कर उठे तो समझ लो कि जो चीज मैंने इसमें डाली थी, वह क्षार थी, यह एक तरीका है लेकिन इस विद्या का तरीका जिसे कि तुम पूछ रहे हो, वह आन्तरिक तौर पर अपने निजत्व से जान-पहचान का है और यह अलग प्रकार का है। जिस प्रकार से एक रसोइया एक किलो दाल डालता है फिर माप कर पानी डालता है और फिर तौल कर नमक डालता है, जब वह दाल को पका लेता है तो वह बिल्कुल ठीक बनती है। दूसरा तरीका यह है कि एक ग्रहणी पानी रख देती है और फिर उसमें दाल डालकर देखती है और कहती है कि ठीक है, फिर नमक को, अपनी हथेली पर रखकर एक नजर दाल में तथा एक पानी में डालती है और कहती है कि ठीक है और नमक दाल में डाल देती है। जब दाल तैयार होती है तो उसमें नमक पूर्णतः ठीक होता है। अब अधरका! तुम्हीं बताओ उस ग्रहणी को कैसे पता चल गया था कि नमक पूरा होगा? यह दृष्टि का एक तरीका है परख का एक ढंग है। यह दृष्टिमानी परख का ढंग है। एक और भी तरीका है 'दृष्टा' का। वह देखा नहीं, सुना नहीं है। जवाहरात के तौल और उसके आभूषण बनाने में जो रत्ती चावल आदि का तरीका है यह दृष्टिमानी परख। लेकिन जवाहरात की जाति पानी आदि की परख दृष्टि का तरीका है। बेटा जी! जिस प्रकार से मैं आँखों के आगे करके देखता हूँ उसी प्रकार से तुम भी देखा करो धीरे-धीरे तुम्हारी भी नजर पारखी हो जाएगी।

अधरका - (ठंडा श्वास भरते हुए) अच्छा शाह जी! आपकी कृपा से शायद कुछ समझ आ जाए।

सालसराए - देखा करो, देखा करो, देखा करो।

इस समय एक नौकर नीचे से आया और कहने लगा कि दुकान में एक नए ढंग का परदेशी खड़ा हुआ है, वह कोई सामान बेचने के लिए उतावला है। यह सुनकर शाह तथा अधरका नीचे दुकान पर आ गए और उसके साथ बातें करने लग पड़े। सालसराए जी ने कहा आओ जी! सेठ जी! किस देश से आए हो? क्या माल लाए हो?

मरदाना - मद्र देश से आए हैं, जहाँ पर कि पाँच नदियाँ बहती हैं तथा एक लाल सी ढेली बेचना आए हैं। यदि आप उसके बदले में चार कौड़ियां दे दो तो हमारा भी भोजन वगैरह

हो जाए।

सालसराए - दर्शन करवाएँ जी।

मरदाने ने एक पोटली खोल कर पाँच-छः मासे का चमचम करता, एक लाल पत्थर का टुकड़ा सालसराए के आगे रख दिया ।

सालसराए - (अच्छी तरह से पलट-पलट कर व देखकर) उस्तादों पर बलिहार जाएँ अधरके! बेटा! सौ रुपए लेकर आओ!

अधराक सौ रुपए ले आया।

सालसराए (मरदाना जी के आगे रखकर) लो महाराज जी! और यह लो अपना लाल इसे सम्भाल कर पोटली में बाँध लो।

मरदाना - तो यह फिर सौ रुपए किस बात के?

सालसराए - (अच्छी तरह से मरदाने की तरफ देखकर) यह सौ रुपए इसकी दर्शनीय भेंट है। हमें प्रतीत होता है कि यह वस्तु किसी जौहरी की है और तुम्हें उसने यह वस्तु देकर शहर के जौहरियों की परख के लिए भेजा है, अन्यथा इस प्रकार के लाल को कौन बेचता है? यह तो हमारा अहोभाग्य है कि इस प्रकार का अत्यन्त सुन्दर और बड़ा लाल अपने जीवन में देख लिया। हमारे उस्ताद जी इस प्रकार के लाल के बारे में प्रायः बतलाया करते थे, जिसे कि आज हमने अपनी आँखों से देख लिया है। वे कहा करते थे कि यदि इस प्रकार के रत्न को कभी देखो तो सबसे पहले उसकी दर्शनीय भेंट करो। जहाँ तक इसकी कीमत की बात है तो यह लाल इतनी कीमत वाला है कि यह अमूल्य है। अतः हमने उन उस्तादों की सलाह या आदेश पर अमल किया है, इसलिए आप यह दर्शनीय भेंट ले जाओ।

अदरका - शाह जी! जरा मुझे भी इस लाल के दर्शन करवाना।

सालसराए - (खुशी में) लो बेटा! देखो!

अदरका - (देख देखकर) शाह जी! आज तो मैं भी कुछ आँख वाला हो गया हूँ। सचमुच ही यह तो बहुत बड़ी सुच्ची और अत्यन्त सुन्दर चीज है। मैंने तो स्वयं ही आज तक इस प्रकार की बाकमाल चीज नहीं देखी थी।

मरदाना - शाह जी! जिस समय मुझे यह पत्थर का टुकड़ा, मेरे मालिक ने दिया तो उस समय मैंने अपने साथ, अपने मालिक का मजाक समझा था। उस समय मैंने समझा था कि यह शौकीन लोगों का शहर है, इसलिए कोई व्यक्ति अपने बच्चों के लिए खिलौने के तौर पर ले लेगा, फलस्वरूप बदले में पेट भर अन्न मिल जाएगा। लेकिन जब मैंने पहले दुकानदार को यह पत्थर का टुकड़ा दिया तो उसने बदले में एक मूली ही दी और कहा कि यह ले लो, हमारे बच्चे इसके साथ दो घड़ियाँ खेल लेंगे।

मैंने कहा कि कम से कम दो मूलियाँ दो दे दो लेकिन उसने नहीं दीं, उसके बाद में एक हलवाई के पास गया तो उसने, इसके बदले में एक सेर मिठाई भी नहीं दी। इसी प्रकार से जब मैं एक कपड़ा विक्रेता के पास गया तो उसने इसकी कीमत एक गज खद्दर का कपड़ा लगाई और जब मैंने उससे इसकी कीमत पैसों के रूप में मांगी तो उसने कहा कि पैसों के लिए तुम किसी सर्राफ के पास जाओ। इसके बाद भी मैं दो-चार दुकानों पर गया जहाँ पर कि इसका मूल्य कुछ अधिक पड़ा। इसी बात से मेरे मन में इसके मूल्य को लेकर कुछ शंका उत्पन्न हो गई, फलस्वरूप में किसी जौहरी की तलाश करता-करता आपके पास पहुँचा हूँ और आपने तो इसका मूल्य, अमूल्य ही बताया है तथा इसकी दर्शनीय भेंट ही सौ रुपए दे दी है। मैं इस भेंट को आपसे, बिना इसे दिए नहीं लूँगा।

सालसराए - आप यह सौ रुपया और यह लाल अपने शाह जी के पास ले जाओ और यदि उन्होंने इसे बेचना ही हुआ तो आप दोबारा आ जाना, फिर हम लोग कई जौहरी मिलकर इसका मूल्य आँक लेंगे, वैसे यह तो बेशकीमती वस्तु है या अमूल्य वस्तु है।

मरदाना - शाह जी! मैं तो रात से ही भूखा हूँ और मालिक जी भूखे तो नहीं हैं लेकिन अन्न उन्होंने भी नहीं खाया है। मेरे लिए हुक्म यह था कि इसे बेचकर भोजन ले आओ।

सालसराए - प्रेमीपुरुष! आप यह ले जाओ, भोजन भी पहुँच जाएगा। आप हमें पता बतला जाओ, हम भोजन पहुँचा देंगे। हम लोग व्यापारी लोग है और आपका शाह तो हमें बहुत बड़ा व्यापारी प्रतीत होता है और वह बहुत ऊंची नजर वाला भी है। वह हमारी बात पर बहुत प्रसन्न होगा, नाराज नहीं।

मरदाना - (जरा माथे में सिकुड़न डालते हुए) पता नहीं वह बड़ा तो अवश्य है (अपने आप से) लेकिन यदि व्यापारी होता तो देश-परदेश में इस प्रकार से घूमने की क्या जरूरत थी फिर तो वह घर बैठा ही अमीर हो जाता। (ऊँची

आवाज में) अच्छा तो फिर मैं चलता हूँ।

सो रुपए और उस लाल को लेकर मरदाना सतगुरू जी के पास पहुँच गया। सतगुरू जी देखकर हँस पड़े। उधर मरदाना जी ने उस लाल व सौ रुपयों को गुरू जी के आगे रखते हुए कहा -

यह लो! अपना तलिस्म, किसी जगह पर तो दो मूलियों का मूल्य भी नहीं पड़ता था और किसी जगह पर सौ रुपए दर्शनीय भेंट तथा मूल्य भी अमूल्य।

गुरू जी - मरदाना! बहुमूल्य चीजों का यही हाल होता है। वे दृष्टि वाली जगह तो अमूल्य हैं और जहाँ उच्च दृष्टि नहीं है, वहाँ पर वे मूल्य रहित हैं।

मुख्य बात तो ऊँची दृष्टि की है, जिसकी दृष्टि ऊंची नहीं थी, उसने एक मूली ही इसका मूल्य लगाया जबकि उच्च दृष्टि वाले ने इसका मूल्य, अमूल्य बतलाया और यह सौ रुपया उसकी आन्तरिक दृष्टि की कद्र का ही प्रतिफल है लेकिन हम लोगों का इस बात पर कोई हक नहीं है कि हम बिना कोई माल दिए उसका मूल्य प्राप्त करें। जाओ! इसे वापिस करके आओ।

मरदाना थक कर चूर-चूर हो चुका था लेकिन जानता था कि वह सौ रुपया अनाधिकृत है और इसे गुरू जी स्वीकार नहीं करेंगे। अतः वह चाहे-अनचाहे उस रकम को वापिस लौटाने के लिए चला गया।

सतगुरू जी उसी जंगल में परमात्मा के प्यार में बैठे हुए किसी प्यार भरी व मधुर लय में गाते रहे थे -

किआ सालाही अगम अपारै ॥
साचे सिरजणहार मुरारै ॥
जिस नो नदरि करे तिसु मेले मेलि मिलै मेलाई हे ॥
अंग - 1022

इस समय अधरका भोजन व पकवान लेकर पहुँच गया और इस मधुर धुन पर मस्त होकर निःशब्द हो गया। उसकी दृष्टि ठहर गई और कोई गहरी खींच उसके अन्दर होने लग पड़ी। जौहरी होने का ख्याल अब उसे भूल गया और आपे से बाहर होकर वह दिव्यानन्द में झूमने लग पड़ा। जब गुरू जी का शबद समाप्त हुआ तो उसने प्रसाद गुरू जी के आगे रखा और स्वयं गुरू चरणों पर ढह पड़ा।

हे नाथ! मैं तो जौहरी रूप होकर आया था लेकिन आप तो मुझे नारायण होकर दिखाई पड़े हो। आपके अन्दर तो परमात्मा की ज्योति चमक मारती है। आपके अन्दर से तो अमृत की मिठास और खुशबू प्रस्फुटित हो रही है। हे परमात्मा के रंग वाले! आपने दर्शन भी दिया, समझ भी दी। बस, अब आप चिरकाल से बिछुड़े हुए को अपने चरणों के साथ जोड़ लो।

मरदाना अब जौहरी के घर रुपयों को लौटा कर वापिस लौट आया, उधर जौहरी इस परम त्याग को देखकर मरदाना के पीछे-पीछे ही चला आया। उसने गुरू जी के पास पहुँच कर चरण-बन्दना की। गुरू जी ने आदर दिया। अब वह जौहरी गुरू चरणों में बैठ गया और बोला -

आप जी का लाल देखकर मन अत्यन्त प्रसन्न हो गया और अब आपके दर्शन करके और भी आनन्दित हो उठा है। मैं तो बहुत दिव्यानन्द को महसूस कर उठा हूँ। आपका देश और नाम?

गुरू जी - देश निरंकार और नाम निरंकारी।

सालसराए - (ध्यानपूर्वक देखते हुए और आकर्षित होकर हमें भी कुछ निरंकार के बारे में बतलाओ?

गुरू जी -

जह देखा तह दीन दइआला ॥
आइ न जाई प्रभु किरपाला ॥
जीआ अंदरि जुगति समाई रहिओ निरालमु राइआ॥
अंग - 1038

सालसराए - जो आपको तो चहुँओर दिखाई पड़ता है लेकिन हमें नहीं दिखाई पड़ता है।

गुरू जी - निर्मल जल में जाला तथा कमल का फूल (जिसके अन्दर मकरन्द रस है) दोनों ही रहते हैं दोनों को एक ही जल की संगत है लेकिन कमल के फूल को जाले का संग व दोष नहीं लगता है। मेढक भी उसी पानी में रहता है लेकिन उसे कमल के पुष्प की कोई समझ नहीं है और वह अमृत रूपी मकरन्द रस की तरफ देखता भी नहीं है।

मेढक जल के अन्दर निरन्तर रहता है लेकिन उसे कमल-पुष्प के बारे में कोई भी समझ नहीं होती है जबकि भंवरे पानी के अन्दर नहीं रहते हैं लेकिन वे दूर से आकर भी कमल के रस को भावार्थ उनके गुणों को प्राप्त कर लेते हैं।

(शेष पृष्ठ 54 पर)

स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार
(Inspired Thoughts of Swami Ram)

डा. स्वामी राम जी

अनुवादक - शमशेर सिंह 'कोमल', एम. ए. एम. फिल.

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक दिसम्बर, पृष्ठ - 54)

स्वयं का शोधन करो, अपनी इच्छा शक्ति का शोधन करो और अपनी इच्छा शक्ति को ही अपना श्रोत बनाओ। फिर यह प्रश्न नहीं रहेगा कि यह करना है, वह नहीं करना है। फिर तुम जो कुछ भी करोगे अच्छी तरह से ही करोगे। आज के संसार के पास सब कुछ बहुत है, बहुत खाने के लिए बहुत हवा, सोने के लिए काफी समय, खुश होने के लिए तथा स्वाद लेने के लिए बहुत कुछ है लेकिन लोगों के लिए न तो समय है और न ही सामर्थ्य है। लोगों के पास शक्ति ही नहीं है क्योंकि उन्हें अपने भावात्मक जीवन को नियमबद्ध ही नहीं करना आता है अर्थात उन्हें जीवन के चारों मुख्य श्रोतों (खाना, काम, सोना व आत्म रक्षा) को नियमबद्ध ही नहीं करना आता है। यदि तुम बाह्य जीवन या सांसारिक जीवन में सफल होना चाहते हो, सकारात्मक बनना चाहते हो तो तुम्हें अपनी भावात्मक शक्ति को, अपनी जागृति के लिए प्रयोग में लाना होगा तभी तुम अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर सकोगे। तुम्हें मुख्य तौर पर इसी दिशा में कार्य करना चाहिए और यह कोई कठिन कार्य भी नहीं है।

स्वयं को जानो

अब तक तुम इस बात को समझ गए होगे कि तुम किस प्रकार से अपनी भावानाओं का मार्ग दर्शन कर सकते हो और उन्हें सही दिशा में लगा सकते हो। बस थोड़ा सा अपने खाने-पीने को बदल कर, अपनी नींद को, अपने काम को और अपने शरीर व मन को समझ कर सब कुछ नियमित कर सकते हो। मैं तुम्हें आश्रम में जाने के लिए नहीं कह रहा हूँ। जब मैं आश्रम में या मठ में जाता हूँ तो मठवासी या आश्रमवासी संसार के बारे में बातें कर रहे होते हैं। वे पूछेंगे कि तुमने न्यूयार्क देखा है? वह किस प्रकार का है? मैं उनसे कहा करता हूँ कि तुम लोग तो मठ में बैठे हो लेकिन फिर भी संसार की बातें कर रहे हो। उधर जब मैं न्यूयार्क में जाता हूँ, तो वे मठ के बारे में बाते कर रहे होते हैं। वास्तविकता तो यह है कि किसी को भी शान्ति नहीं है। शान्ति प्राप्त करने के लिए तुम्हें दौड़भाग करने की आवश्यकता नहीं है। इसके लिए न तो तुम्हें घर बार छोड़ने की ही आवश्यकता है और न ही वृक्ष के नीचे बैठने की जरूरत है तथा न ही हिमालय पर्वत पर या मठों में ही जाने की जरूरत है। ये सारी बातें ही झूठी हैं। आवश्यकता है अपने काम को, अपने जीवन जीने के ढंग को, अपनी सोच को, अपने संवेगों को, संगठित करने की, उन्हें नियमबद्ध करने की। साथ ही स्वयं को सृजनात्मक भी बनाना चाहिए ताकि जीवन आसान हो सके।

यह कभी भी मत भूलो कि यह शरीर परमात्मा की देन है और उसी का निवास इस शरीर के अन्दर है। अतः सर्वप्रथम उसी को जानो। जिस दिन तुम्हारे अन्दर उसे जानने की तीव्र उत्कंठा उठ जाएगी उसी दिन तुम आत्म सिद्धि को अपना लक्ष्य बना लोगे। फिर तुम क्या बन जाओगे? क्या फिर तुम अपना मजहब बदल लोगे? नहीं, फिर तुम्हें अपने मजहब को बदलने की जरूरत नहीं है। चाहे तुम इसाई हो, चाहे हिन्दू हो, चाहे बौद्ध धर्म के अनुयाई हो चाहे तुम अन्य किसी भी धर्म को मानने वाले हो, इससे कुछ भी फर्क नहीं पड़ता है। स्वयं को जान लेने के बाद तुम सभी को जान लेते हो। फिर तुम सभी के साथ ज्ञान का संचार कर सकते हो।

हम लोग तो एक दूसरे के साथ ज्ञान का संचार ही नहीं करते हैं क्योंकि हम स्वयं को जानते ही नहीं हैं। यही कारण है कि हमें दूसरों को समझना ही नहीं आता है और यही हमारी सबसे बड़ी समस्या है। हम प्रत्येक समय प्यार के बारे में बातें करते हैं लेकिन हम स्वयं को समझे व जाने बिना दूसरों से प्यार कर ही नहीं सकते हैं और न ही उनसे प्यार ले सकते हैं। हम लोग इसीलिए अकेले हैं क्योंकि हम स्वयं को जानते

ही नहीं हैं। हम लोग तो इस प्रकार के दोस्त चाहते हैं जो कि हमें खुश रख सकें। दरअस्ल कोई भी किसी दूसरे को खुश कर ही नहीं सकता है। खुशी तो तुम्हारे द्वारा ही सृजन की हुई वस्तु है, जबकि तुम वाहिगुरू जी या परमात्मा द्वारा सृजित हो। तुम्हें इस बात को कभी भी भूलना नहीं चाहिए।

तुम्हारे अन्दर बहुत सारी सकारात्मक शक्तियाँ हैं। भावों की शक्ति बहुत ही प्रशंसनीय है, यदि तुम इसका सकारात्मक प्रयोग करते हो तो यह तुम्हें मिनटों में ही जागृति प्रदान कर सकती है। महात्मा बुद्ध जी ने कहा था कि अपने दीपक को स्वयं ही जलाना सीखो, अन्य कोई भी तुम्हें मुक्ति प्रदान नहीं कर सकता है। तुम्हें केवल यह जानने की जरूरत है कि जीवन के दीपक में कौन सी रौशनी है? और कौन सी बाती जलती है?

अपनी भावनाओं को ऊपर लेकर जाओ। सचेतनता तक लेकर जाओ। स्वयं को पूछो कि क्या मैं केवल शरीर हूँ? यदि नहीं तो फिर मैं क्या हूँ? क्या मैं इन्द्रियाँ हूँ? क्या मैं मन हूँ? लेकिन मैं यह सब कुछ तो हूँ ही नहीं। फिर मैं क्या हूँ? क्या मैं प्रकाश हूँ? क्या मैं जीवन ज्योति हूँ, एक स्थाई ज्योति जो कि अजर, अमर व अविनाशी है जो कि कभी भी बदलती नहीं है, कभी भी मिटती नहीं है। जब हम सभी लोग भय मुक्त हो जाते हैं, तो फिर कहीं हमें जीवन मनोरथ की समझ आ पाती है, तब कहीं जाकर अपने अन्दर के जीवन को नियमित करने की सामर्थ्य उत्पन्न होती है। अपनी भावनाओं को नियमित करने की सामर्थ्य उत्पन्न होती है, तब कहीं जाकर हम अपनी चार मूलभूत आवश्यकताओं को नियमित कर सकते हैं।

सारे ही सन्त या पादरी त्यागी नहीं होते हैं। बहुत सारे संत संसार में इसलिए रह सके क्योंकि उन्होंने अपनी जरूरतों को नियन्त्रित कर लिया, अपनी भूख को नियमित कर लिया। कोई भी व्यक्ति, जो ऐसा कर सकेगा वह इसी समय जीवन मुक्त हो सकता है। इस प्रकार का मनुष्य कमल के फूल की तरह से है जो कि कीचड़ में रहकर भी कीचड़ से ऊपर ही रहता है। इस प्रकार का मनुष्य संसार में रहते हुए भी संसार का नहीं होता है। प्रत्येक मनुष्य के अन्दर इस प्रकार से रहने की सामर्थ्य है लेकिन इसकी प्राप्ति तभी हो सकती है जबकि हम अपनी जरूरतों, शक्ति तथा मन पर नियन्त्रण स्थापित कर लेते हैं। हमें जरूरत है, अपने भावों को समझने की। इस बात को बुल्लेशाह जी ने बहुत ही अच्छी तरह से व बहुत ही सरल ढंग से समझाया है। किसी ने बुल्लेशाह को पूछा कि परमात्मा को किस प्रकार से पाया जा सकता है? बुल्लेशाह ने कहा कि तुम परेशान क्यों हो? परमात्मा का क्या पाना, इधर से हटाना और उधर लगाना। यानि कि स्वयं को संसार की तरफ से हटाकर परमात्मा की तरफ लगाना है।

मुख्य आवश्यकता है अपनी मनोवृत्ति को बदलने की। स्वयं को बदलने की जरूरत नहीं है, कुछ भी बदलने की जरूरत नहीं है। तुम्हारे माता-पिता, तुम्हारे हैं। तुम्हारे बच्चे, तुम्हारे हैं; तुम्हारे मित्र, तुम्हारे हैं, किसी को भी बदलने की जरूरत नहीं है। बस आवश्यकता है तुम्हें अपनी मनोवृत्ति को बदलने की। संसार के प्रति अपनी मनोवृत्ति को बदलो। तुम जहाँ कही भी हो बस एक बात को समझ लो और एक उसूल बना लो कि संसार में जो कुछ भी है वह तुम्हारे लिए है। इसे प्रयोग में लाना सीखो, लेकिन इसके साथ मोह मत डालो। उदाहरण के तौर पर मैं इस स्थान पर इस हॉल में हूँ लेकिन क्या यह मेरा है? नहीं, लेकिन मुझे इसे प्रयोग में लाने का अधिकार है। इसी सिद्धान्त को समझते हुए जीवन का आनन्द उठाओ। संसार में रहो और संसार की वस्तुओं से प्यार करो। प्यार यह समझकर करो कि यह सब कुछ तुम्हारा नहीं है। इनके साथ मोह मत डालो। जीवन का यह दर्शन बहुत ही सरल व सीधा है, इसे प्रयोग में लाओ। संसार बहुत ही सुन्दर जगह है, इसलिए तुम इसमें लिप्त हो जाते हो, लेकिन समझदार मनुष्य संसार में रहना सीख लेता है। वह संसार में रहते हुए भी संसार से ऊपर उठकर रहता है, भावार्थ वह संसार में ही लीन नहीं होता है और वह उससे मोहभाव भी नहीं रखता है। वास्तव में सच्चा गुरू वह है जो कि संसार में रहना तो जानता है लेकिन वह संसार में ही लीन नहीं हो जाता है।

'चलता'

(पृष्ठ 52 का शेष)

सालसराए - हे महात्मा जी! इसका क्या कारण है?

सतगुरू जी - अनुभव की कमी। जिस प्रकार से चन्द्रमा को कुमुदनियाँ दूर से ही देखकर खिल जाती हैं, कारण अनुभव है।

सालसराए - साईं के साईं लोक जी! कृप्या हमारा भी अनुभव खोलने की कृपा करें।

गुरू जी - जिस प्रकार से तुम्हारी दृष्टि को हीरे व जवाहरात परखने का अनुभव है, हमारे सज्जन मरदाने को राग व रागनियों की लहरों का अनुभव है, जिस तरह से किसी कवि को किसी उच्च रस का अनुभव हो जाता है, उसी प्रकार से निरंकारियों को भी किसी दिव्य प्रकार का अनुभव परमात्मा के सम्बन्ध में हो जाता है।

यह सुनकर मरदाना जी को पहले दिन वाला, गुरू जी द्वारा दिया गया सारा उपदेश याद आ गया। उधर जौहरी को भी अपनी सारी बातचीत याद आ गई जो कि उसने अपने शागिरद अधरके के साथ की थी, दिलों के अन्दर कंघियाँ फिर गईं। सालसराए के दिल में गुरू जी के प्रति आदर सम्मान बहुत बढ़ गया। अब सालसराए ने प्रसाद ग्रहण करने के लिए विनती की क्योंकि माया तो गुरू जी ने वापिस ही लौटा दी थी, फकीरों को इसकी जरूरत ही नहीं होती है। अब प्रसाद मरदाना जी को भी दिया तथा स्वयं भी ग्रहण किया जिसे कि अधरके ने बड़े प्रेमभाव से ग्रहण करवाया।

रतवाड़ा साहिब में महापुरुषों के प्रवचनों का कार्यक्रम

प्रत्येक रविवार रतवाड़ा साहिब - (12.00 बजे से 4.00 बजे तक)

पूर्णमाशी - 19 फरवरी, दिन मंगलवार।

(रात्रि 07.00 बजे से 10.00 बजे तक)

संक्रान्ति - फलगुणि, 13 फरवरी, दिन बुद्धवार (प्रातः 5.30 बजे से 8.00 बजे तक)

अमृत संचार - माह के प्रथम रविवार को दिन के 11.00 बजे होता है।

INTERNET MEDIA AND LIVE TELECAST

Website : www.ratwarasahib.in

Website : www.ratwarasahib.org

Instagram : RATWARA SAHIB (https://instagram.com/ratwara.sahib/)

You Tube : https://www.youtube.com/user/babalakhbirsingh

Facebook : https://www.facebook.com/ratwarasahib1

Twitter : https://mobile.twitter.com/ratwarasahib13

Live Audio Link 1 - https://www.awdio.com/Ratwara Sahib

Live Audio Link 2 - https://mixlr.com/ratwara-sahib

E-mail :- sratwarasahib.in@gmail.com

Contact - 9569455861, 9417912900, 9814612900

आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यूिवल या दसवंद पंजाब एंड सिंध बैंक की किसी भी शाखा द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में भेजी जा सकती है।

भारत (INDIA)

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यूिवल भेजने के लिए -

VGRMCT / Atam Marg Magazine
S/B A/C No. 12861000000003 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

दसवंद भेजने के लिए -

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
SB A/C No. 12861100000005 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

विदेश (ABROAD)

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
Punjab National Bank SB A/C No. 0779000100179603
RTGS/IFSC Code - PUNB0077900 Branch Code - 077900

यदि चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा राशि भेजनी हो तो ऊपरलिखित खातों अनुसार **Gurdwara Ishar Parkash Ratwara Sahib, P.O. Mullanpur Garibdas. Distt S.A.S. Nagar (Mohali) - 140901** पर भेजने की कृपा करें। यदि **Online** राशि भेजनी हो तो राशि की जानकारी देते समय अपना नाम व पूरा पता मोबाइल नं. +91-98889-10777 पर **SMS** भेजें जी।

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि यदि आपने अभी तक आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की सदस्यता ग्रहण नहीं की है तो आप कृप्या अधोलिखित प्रारूप पत्र को भरकर सदस्यता ग्रहण करने की कृपा करें। यदि आप पहले से ही सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं, तो पुनर्नवीनीकरण हेतु इस प्रारूप पत्र के साथ आवश्यक चैक/ड्राफ्ट "VGRMCT/ATAM MARG MAGAZINE" के नाम पर प्रेषित करने की कृपा करें।

Subscription form ✓ ☐ नई सदस्यता ☐ पुनर्नवीनीकरण ☐ आजीवन सदस्यता

within India

Subscription Period	By Ordinary Post/Cheque	By Registered Post/Cheque
1 Year	Rs. 300/320	
3 Year	Rs. 750/770	
5 Year	Rs. 1200/1220	
Life	Rs 3000/3020	

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 $
Europ	50 Euro	500 Euro
Australia	80 Aus $	800 Aus $

जनवरी ☐ फरवरी ☐ मार्च ☐ अप्रैल ☐ मई ☐ जून ☐ जुलाई ☐ अगस्त ☐ सितम्बर ☐ अक्तूबर ☐ नवम्बर ☐ दिसम्बर ☐

नाम/Name पता/Address..

....

...............Pin Code............. Phone .... E-mail :...........................

सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल, रतवाड़ा साहिब

समय - सुबह 9.30 बजे से 2.00 बजे तक (रविवार से शुक्रवार)

डाक्टरों का समय - सुबह 10.00 बजे से 12.00 बजे तक

दूरभाष नं. 98786-95178, 92176-93845

डा. का नाम	विशेषज्ञ	दिन
1. डा. जसबीर कौर	जनरल मैडिसन	सोमवार
2. डा. गुरिंदर कौर कंग	एम. डी. (गाइनी)	सोमवार
3. डा. कुलदीप सिंह कंग	एम. डी. (आँखों के विशेषज्ञ)	सोमवार
4. डा. हरबंस सिंह	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	मंगलवार
5. डा. तेजिंदर सिंह	जनरल मैडिसन	मंगलवार
6. जे.पी.आई. अस्पताल मोहाली के डाक्टर	आँखों के विशेषज्ञ	मंगलवार
7. डा. जतिन्दर सिंह तथा डा. कोमलप्रीत कौर	दाँतों के विशेषज्ञ	मंगलवार
8. श्री माइकल जी	एक्स-रे विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
9. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	बुद्धवार
10. डा. जे. एस. गुजराल	जनरल मैडिसन/शिशु रोग विशेषज्ञ	बुद्धवार
11. डा. आर. एस. संधू	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	वीरवार
12. डा. संतोष अनेजा	जनरल मैडिसन	वीरवार
13. डा. एस. के. बांसल	जनरल मैडिसन	शुक्रवार
14. डा. बरिन्दर सिंह	जनरल मैडिसन तथा त्वचा रोग विशेषज्ञ, एअरो स्पेस मैडिसन	शुक्रवार
15. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	रविवार
16. डा. जिंदल	जनरल मैडिसन	रविवार
17. डा. गुरप्रीत कौर गिल	होम्योपैथिक	बुद्धवार
18. बीबी वरश प्रभा	फिजियोथैरेपिस्ट	सोमवार तथा शुक्रवार

-: लैबोरेटरी टैस्ट तथा अन्य सुविधाएँ :-

1. खून टैस्ट, 2. सारे खून सैल काउंट टैस्ट 3. ब्लड शुगर टैस्ट, 4, किडनी टैस्ट, 5. लीवर टैस्ट, 6. लिपिड परोफाइल टैस्ट, 7. थायराइड टैस्ट, 8. हिमोग्लोबिन टैस्ट, 9. पेशाब टैस्ट, 10. स्टूल टैस्ट, 11. ई.सी.जी., 12. एक्स-रे (क्ष-किरण)

सारे लैबोरेटरी टैस्ट आधे शुल्क पर किये जाते हैं तथा मरीज को दवाई मुफ्त दी जाती है।

प्रत्येक रविवार को अस्पताल खुला रहेगा। समय 11.00 से 1.00 बजे तक। प्रत्येक शनिवार को अस्पताल बन्द रहेगा।

विश्व गुरमत रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट

के मुख्य संस्थापक प्यारे महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तकें

यह पुस्तकें श्री गुरू ग्रन्थ साहब जी के गूढ़ सिद्धान्तों को सरल रूप में स्पष्ट करके जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इनकी विषय वस्तु के रूप में नाम, सेवा व स्मरण की विधियों को प्रस्तुत करते हुए जन साधारण की भाषा का अत्यन्त सरल, मार्मिक व हृदयस्पर्शी प्रयोग किया गया है। यह दुर्लभ पुस्तकें, प्रत्येक जिज्ञासु व साधक के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में हैं। अध्यात्मिक सुख व शान्ति प्राप्त करने हेतु आप इन्हें प्राप्त करके स्वयं पढ़ें तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। यह सभी पुस्तकें गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहब में आपकी सेवार्थ उपलब्ध हैं -

हिन्दी	
1. सुरति शबद मार्ग	70/-
2. किव कुड़ै तुटै पालि	35/-
3. बात अगंम की - सात भागों में	400/-
4. किव सचिआरा होइए - भाग पहला	35/-
5. किव सचिआरा होइए - भाग दूसरा	65/-
6. किव सचिआरा होइए - भाग तीसरा	100/-
7. होवै आनन्द घणा	30/-
8. बाबाणियाँ कहानियाँ	50/-
9. सुरतिआं उपजै चाउ	40/-
10. सर्व प्रिय गुरू गोबिंद सिंह जी	10/-
11. भक्त प्रहलाद	10/-
12. अमृत फुहार	10/-
13. अगम अगोचर का मार्ग	70/-
14. जपुजी साहिब सटीक	15/-
15. अमर ज्योतियाँ	15/-
16. अमर गाथा	100/-
17. वैशाखी	10/-
18. साजन चले प्यारिआ	10/-
19. अविनाशी ज्योति - भाग 1	90/-
20. रूहानी गुलदस्ता	70/-
21. चउथै पहरि सबाह कै	60/-

English Version	Price
1. Baisakhi	Rs. 5/-
2. How Rend The Veil of Untruth	Rs. 70/-
C. Discourses on the Beyond -1	Rs 50/-
4. Discourses on the Beyond -2	Rs. 50/-
5. Discourses on the Beyond -3	Rs. 50/-
6. Discourses on the Beyond -4	Rs. 60/-
7. Discourses on the Beyond -5	Rs. 60/-
8. The way to the imperceptible	Rs. 80/-
9. The Lights Immortal	Rs. 20/-
10. Transcendental Bliss	Rs. 70/-
11. How to Know Thy Real Self-(Vol-1)	Rs. 80/-
12. How to Know Thy Real Self-(Vol-2)	Rs. 80/-
13. How to Know Thy Real Self-(Vol-3)	Rs. 110/-
14. The Dawn of Khalsa Ideals	Rs. 10/-
15. A Glimpse of His Holiness - Baba ji	Rs. 5/-
16. Divine Word Contemplation Path	Rs. 150/-
17. The Story of Immortality	Rs. 260/-
18. Why not Contemplate the Lord	Rs. 200/-

ऊपरलिखित पुस्तकें आप जी मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा रतवाड़ा साहिब से मंगवा सकते हैं या ट्रस्ट के अकाउंट में राशि जमां करवा कर मोबाइल नं. 9417214391, 9592009106, 9417214379 पर सूचित कर सकते हैं। **Bank Name : Pb & Sind Bank, A/c Name. VGRMCT/Atam Marg Magazine, S/B A/C No. 12861000000003, RTGS/IFSC Code - PSIB0021286, Branch Code - C1286**

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी गुरुद्वारा साहिब मिलवूट, एडमिन्टन, कनाडा में संगत को कीर्तन द्वारा कृतार्थ करते हुए।

SANT BABA HARPAL SINGH JI
RATWARA SAHIB

रूहानी प्रचार फेरी

USA ROOHANI PARCHAR FERI

1th Feb to 30th March 2019

-: Contact :-
BHAI MANJIT SINGH
+ 1-317-488-8831
BHAI AMARDIP SINGH
+ 1-408-393-8199

कलम के धनी, प्यार के सागर व आत्म मार्ग मैगजीन के संचालक श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी आत्म मार्ग कार्यालय में, जो कि रतवाड़ा साहिब में स्थित है, मैगजीन के लिए अनुभवी प्रवचन लिखते हुए।

आत्म मार्ग के सहृदय, सम्माननीय व प्यारे पाठकजनों को अपील

आत्म मार्ग, विगत 24 वर्षों से एक विशेष गुरमति सिद्धान्त का निरूपण कर रहा है, जो कि मनुष्य जीवन का आदर्श है। पड़ाव-दर-पड़ाव, उस मंजिल के लिए कोशिश जारी है। प्यारे महापुरुषों (ब्रह्मलीन श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी) के अन्दर यह विचार काफी लम्बे समय से आ रहे थे कि एक इस प्रकार का मैगजीन निकले, जिसमें कि रूहानियत की पूरी पढ़ाई पढ़ी जा सके, भावार्थ नर्सरी से शुरू होकर पी.एच.डी. तक के सफर की समझ उत्पन्न हो सके। वास्तव में इस ख्याल के पीछे एक बहुत बड़ी सोच तथा शक्ति कार्य कर रही थी। दरअस्ल यह सोच तथा शक्ति, राड़ा साहिब वाले महापुरुषों (श्रीमान सन्त ईशर सिंह जी) वालों की थी। किसी समय सन् 1975 ई. से पहले उन्होंने यह प्रवचन, इनके साथ शेयर किया था कि कोई रूहानी मैगजीन निकालना चाहिए, लेकिन उनका यह मानना था कि यह कार्य या तो सन्त वरियाम सिंह जी कर सकते हैं या फिर ज्ञानी मेहर सिंह जी कर सकते हैं। ज्ञानी मेहर सिंह जी से सतगुरू जी ने इस सम्प्रदाय के महापुरुषों के जीवन लिखने की सेवा ली तथा प्यारे महापुरुषों (श्रीमान सन्त वरियाम सिंह जी) के द्वारा रूहानी मैगजीन की सेवा ली। राड़ा साहिब वालों का यह भी विचार व ख्याल था कि कीर्तन की फिल्में बनाकर गुरमति का प्रचार किया जाए। इस कार्य के लिए भी उन्होंने रतवाड़ा साहिब वाले प्यारे महापुरुषों को माया की पेशकश की लेकिन आप जी ने अपनी कमाई में ही बरकतें डालने की अरदास करके व्यक्तिगत कमाई में से ही यह सेवा करने की वचनबद्धता प्रकट की। राड़ा साहिब वाले महापुरुषों के अनेकों भविष्य के वचन, जहाँ अनेकों कल्युगी जीवों के उद्धार का माध्यम बने, वहीं उनके द्वारा इन दोनों कार्यों की सेवा रतवाड़ा साहिब वाले प्यारे महापुरुषों के द्वारा करवाई गई। साहिब श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की कृपा की बदौलत सन् 1995 ई. में बैसाखी के पावन पर्व पर आत्म मार्ग मैगजीन की शुरूआत की गई।

आत्म मार्ग मैगजीन रूहानियत की सुगन्ध को बिखेरता हुआ, आप जी के पास लगभग विगत बीस वर्षों से पहुँच रहा है। आप जी को, महापुरुषों, अन्य सबुद्धिजीवियों तथा अन्य आत्म मार्ग में रंगे हुए गुरुमुख प्यारों के अनुभवी प्रवचनों को पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आत्म मार्ग संस्था की यह हार्दिक इच्छा है कि इस रूहानी खुशबू को आप तथा आप जी का परिवार और अधिक लम्बे समय तक प्राप्त करता रहे। इस सम्बन्ध में आप जी को सविनम्र निवेदन है कि आप जी के मैगजीन की सदस्यता (मैंबरशिप) बीस वर्षों के बाद समाप्त हो रही है/गई है। कृपा करके 'आत्म मार्ग' का अगला साथ निभाने के लिए आजीवन सदस्यता (लाइफ मैंबरशिप) रु. 3000/- के साथ पुनर्नवीनीकरण (रिन्युवल) करवा कर आत्म मार्ग के पथिक बने रहने का गौरव प्राप्त करो जी।

संस्था 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब

नोट - माया भेजने के लिए ब्यौरा व खाता संख्या विवरण मैगजीन के अन्तिम पृष्ठों पर दिया गया है।